मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

दुआ - बन्दा-ए-मोमिन की ताक़त

दुआ मोमिन बन्दे की ताक़त है। उसका सहारा है। दुआ ही उसकी तलवार है जिससे वह हमला करता है। और दुआ ही उसकी ढाल है जिससे वह दुश्मनों का वार रोकता है। दुआ अल्लाह की तौफ़ीक़ का मज़हर है और बादल की वह घटाएं हैं जो अल्लाह की रहमत के आने का पता देती हैं। दुआ की तौफ़ीक़ होना अपनेआप में एक अज़ीम बख़्शिश है। इस्तिग़फ़ार व दरूद दोनों दुआओं के ज़ेवर हैं। इस्तिग़फ़ार ख़ुद हज़ार दुआओं की एक दुआ है, अपने गुनाहों को क़ुबूल करना, गुनाहों को याद करना। अल्लाह की बख़्शिश का यक़ीन, दुआओं के लिये ज़िन्दगी का ख़ून है। और दरूद यानि मोहसिने आज़म स०अ० की पर सलात व सलाम एहसान मानने का आईना है। दिल को जिस ज़ात स०अ० ने वली बनाया, अल्लाह तआला के नामों व विशेषताओं से आगाह कराया, मांगने और हाथ फैलाने का ढंग सिखाया उन एहसानों को मानने व उनकी क़द्र करने का नाम दरूद है। जो अल्लाह को बहुत प्यारी है। और ये ख़ुद भी बड़ी पसन्दीदा है। ऐसी दुआ जो बिल्कुल रद्द नहीं होती। उसकी रहमत से ये बईद है कि वो अव्वल व आख़िर की दुआओं को क़ुबूल फ़रमा ले और दरमियान की दुआओं को नज़रअन्दाज़ कर दे, ऐसा सोचना भी जुर्म और गुनाह है और दुआओं की बरकम से महरूमी की वजह है।

मौलाना अब्दुल्लाह अब्बास नदवी रह०

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

MAR 15
₹ 10/-

दुआएं मांगने की फ़ज़ीलत व अहमियत

"कोई भी व्यक्ति ऐसा न होगा जिसको हर प्रकार की भलाई की आवश्यकता न हो। इसीलिये अल्लाह तआला ने अनगिनत साधन पैदा किये हैं जिनके द्वारा ज़रूरतमन्द उनसे मदद लें और नुक़सान से बचें एवं मकरूह चीज़ों से नजात पाएं। इन साधनों में बहुत सी चीज़ों का संबंध दुनिया की भलाई से है और कुछ का संबंध आख़िरत की भलाई से है। किन्तु केवल दुआ एक ऐसी चीज़ है जिसमें दुनिया व आख़िरत दोनों की भलाई शामिल है। इसीलिये क़ुरआन शरीफ़ और हदीस शरीफ़ में इसकी अत्यधिक ताकीद आयी है। इसीलिये अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमाया कि बड़ी इबादत तो दुआ है और फ़रमाया जिसको दुआ की तौफ़ीक़ हो गयी उसके लिये स्वीकार्यता के दरवाज़े खुल गये और एक रिवायत में है कि जन्नत के दरवाज़े खुल गये और एक रिवायत में है कि रहमत के दरवाज़े खुल गये और फ़रमाया अल्लाह तआला से कोई चीज़ नहीं मांगी गयी जो आफ़ियत के मांगने से ज़्यादा महबूब हो। इसी से मालूम हुआ कि दुनिया की ज़रूरतों को भी मांगने का हुक्म है और फ़रमाया एहतियात और उपायों से तक़दीर नहीं टलती और दुआ नाज़िल हो चुकी बला को भी टाल सकती है और उस बला को भी टाल सकती है जो अभी तक नाज़िल नहीं हुई। कभी इधर से बला चलती है और उधर से दुआ आकर मिलती है और दोनों में क़यामत तक कुश्ती हुआ करती है। इसी से मालूम हुआ कि दुआ सभी उपायों से बढ़कर है। और ये मालूम हुआ कि मुसीबत से पहले भी दुआ करता रहे कि उसकी बरकत से मुसीबत न आये। और ये भी मालूम हुआ कि कुबूलियत की ये भी शर्त होती है कि उसकी वजह से कोई बला टल जाती है। दुआ करने के बाद बदगुमान नहीं होना चाहिये और इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआला के नज़दीक कोई भी चीज़ दुआ से ज़्यादा क़द्र व मूल्य वाली नहीं। और इरशाद फ़रमाया कि जिसको ये बात पसंद हो कि अल्लाह तआला सख़्तियों के वक़्त उसकी दुआ कुबूल फ़रमाया करे उसको चाहिये कि ख़ुशी के ज़माने में ख़ूब दुआ मांगा करे। इससे पता चला कि मुसीबत न होने पर दुआ मांगने का असर मुसीबत के वक़्त दुआ मांगने में होता है। और फ़रमाया दुआ में हिम्मत न हारो क्योंकि दुआ करते हुए कोई काम बेकार नहीं जाता। फ़रमाया गया दुआ मुसलमानों का हथियार है और दीन का स्तम्भ है। आसमान व ज़मीन का नूर है। रसूलुल्लाह स०अ० एक बलाज़दा क़ौम पर से गुज़रे तो आप स०अ० ने इरशाद फ़रमाया कि ये लोग अल्लाह तआला की आफ़ियत क्यों नहीं मांगते। फ़रमाया कि कोई ऐसा मुसलमान जो दुआ में अड़ जाए और फिर उसको अता न हो, चाहे उसी समय उसको मिल जाए या बाद की लिये जमा कर ली जाए। इससे मालूम हुआ कि दुआ कुबूल ज़रूर होती है मगर इसकी सूरतें अलग—अलग होती हैं। कभी वही चीज़ मिल जाती है। कभी उसके लिये कुछ अज्र व सवाब मिल जाता है और कभी सवाब जमा हो जाता है और ऊपर मालूम हो चुका है कि कभी उसकी बरकत से बला टल जाती है। ग़रज़ अल्लाह तआला के दरबार में हाथ फैलाने से कुछ न कुछ मिलता ही रहता है। लेकिन बावजूद इसके देखा ये जाता है कि अक्सर लोगों को आम लोगों को क्या ख़ास को भी कोई ख़ास मतलब नहीं है। यहां तक कि जो वक़्त दुआ की कुबूलियत के हैं उनमें भी सरसरी तौर पर दुआ मांगी जाती है। और कोई ध्यान नहीं दिया जाता। ये समझ कर दुआ करने का तो ज़िक्र ही क्या की ये अल्लाह तआला के दरबार में पेश कर देना और बार—बार दरख़्वास्त लगाते रहना कामयाबी का एक असरदार तरीका है।

अगर कोई मुसीबत पड़ती है और हाथ पांव मारने से कोई काम नहीं चलता तो मजबूरी दर्जे कोई एक आध आदमी अल्लाह की ओर आकर्ि ति होता है वह भी दुआ की तरफ़ बहुत कम बल्कि दौड़ ये होती है कि कोई अमल या वज़ीफ़ा कोई ऐसा बता दे जिससे काम हो जाए, लेकिन उन कामों में और वज़ीफ़ों में वो बरकत कहां जो अल्लाह और उसके रसूल की बतलायी हुई दुआओं में है।"

हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह०

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंकः३ मार्च २०१५ ई० वर्षः७

संरक्षकः हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

निरीक्षक
मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेट्रेट्री- दारे अरफ़ात

सह सम्पादक
मौ० नफ़ीस ख़ॉ नदवी

सम्पादकीय मण्डल
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

मुद्रक
मौ० हसन नदवी

अनुवादक
मोहम्मद सैफ़

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

इस अंक में:

बदलती परिस्थितियां और..........३
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुसलमान अपनी हैसियत को पहचानें..........४
हज़रत मौलाना सैय्यद राबे हसनी नदवी

दुआ की अहमियत..........५
मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

इस्लामी अक़ीदा..........६
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

नमाज़ के वक़्त..........८
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

बदनज़री और उसके नुक़सान..........१०
मौलाना युनूस साहब पालनपुरी

इस्लाम – महिलाओं के अधिकारों का रक्षक.....११
मुफ़्ती अब्दुल फ़ताह आदिल

अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का दोहरा मापदण्ड.....१३
डॉक्टर आमिर लियाक़त हुसैन

सोशल मीडिया पर इस्राईल की शर्मनाक..........१५
जनाब रिज़वान असद

समाज सुधार का प्रयास..........१६
मसऊद अहमद आज़मी

गुआन्तानामो बे..........१७
मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

फ़िलिस्तीन के पीड़ित मुसलमान..........१८
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

रब्ब–ए–काबा की क़सम..........२०
अबुल अब्बास ख़ाँ

सम्पादकःबिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

प्रति अंक 10रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

दुआ — मोमिन का हथियार

मांगना अल्लाह तआला की ज़ात को बहुत पसंद है। इसीलिये हज़रत मुहम्मद स०अ० ने फ़रमाया: दुआ पूरे दिल से और उम्मीद से किया करो, घबरा और उकता कर नहीं, और न मांगने वाला उसकी रहमतों दूर हो जाता है। अल्लाह तआला का इरशाद है:

"बेशक जो लोग मेरी बन्दगी से सरताबी कर रहे हैं, वे अनक़रीब ज़लील होकर जहन्नम में पड़ेंगे।" (अलग़ाफ़िर: ६०)

अल्लाह की नज़र में दुआ से बढ़कर पसंदीदा कोई चीज़ नहीं, आप स०अ० का इरशाद है: (मोमिन के लिये दुआ हथियार है) लिहाज़ा जो शख़्स इस हथियार से लैस न हो, वो दुनिया की ज़िन्दगी में नाकाम व नामुराद और अल्लाह के गुस्से को भड़काने वाला होता है। इसीलिये अल्लाह के रसूल स०अ० का इरशाद है: "जो अल्लाह से मांगता नहीं उससे अल्लाह तआला नाराज़ होते हैं।"

अत: इन्सान की सबसे बड़ी नेकी ये है कि वह हर हाल में अपने मालिक व ख़ालिक को याद करे, उसी का ध्यान करे, उसी को सहारा ढूंढे, वह उससे बहुत क़रीब है, उसका इरशाद है: "हम इन्सान की शहे रग से भी ज़्यादा करीब हैं।" (सूरह काफ़: १६)

"और जब मेरे बन्दे मुझसे मांगते हैं तो मैं क़रीब होता हूं, पुकारने वाले की पुकार क़ुबूल करता हूं, जब भी वह मुझे पुकारता है, तो चाहिये कि वह मेरी बात माने, मुझ पर ईमान लाये ताकि राहेयाब हो।" (सूरह बक़रा: १८६)

आप स०अ० की पूरी ज़िन्दगी दुआओं का आइना है। आपके बन्दे होने के सम्पूर्णता की झलकियां उन दुआओं के आइने में भी देखी जा सकती हैं। ज़िन्दगी का कौन सा मरहला और कौन सी ऐसी हालत होगी जिसमें आप स०अ० की दुआंए हमारे लिये असरदार, यक़ीन को बढ़ाने वाली, बसीरत देने वाली और नतीजा देने वाली और तसल्ली देने वाली और सुकून का साधन न हों। तन्हाई में, महफ़िल में, सफ़र में, हज़र में, सोने और जागने में, ख़ुशी और ग़मी के मौक़ों में, आपसी संबंधों के साये में और समाज की पेंचदार राहों में आपकी दुआओं की मशालें प्रकाशमान है, जो हमारे लिये जीवन का अनमोल उपहार है। कितना ही ख़ुशनसीब है वो व्यक्ति जो उसके प्रकाश से लाभान्वित हो और मुसीबतों और हादसों और मुश्किलो में उस मालिक का सहारा ढूंढे और दुनिया व आख़िरत की नेकियों को पाये।

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

सम्पादकीय

बदलती परिस्थितियां और....

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

दुनिया के हालात न कभी एक समान रहे हैं और न रहेंगे। क़ौमों के उत्थान व पतन की दास्तानें हमेशा दुहरायी जाती रहेंगी। ये फ़ैसला हमेशा के लिये है। "और ये (आते जाते) दिन हम लोगों में अदल–बदल करते रहते हैं।" (सूरह आले इमरान: 140) लेकिन इन्हीं बदलते हुए हालात में और ज़िन्दगी की उलटफेर में सच्चाई के दिये जगमगाते रहेंगे और रह रह कर दुनिया उनसे रोशन होती रहेगी। मुबारकबाद के लायक़ हैं वो लोग जो तेज़ व तुन्द आंधियों में भी वो दिये गुल नहीं होने देते।

हवा गो तेज़ व तुन्द है लेकिन चिराग़ अपना जला रहा है।
वो मर्दे दुरवेश जिसको हक़ ने दिये हैं अन्दाज़े ख़ुसरुवाना।।

हाताल से प्रभावित होना एक स्वाभाविक बात है, लेकिन उसके आगे हथियार डाल देना मायूसी अपना लेना ज़िन्दा लोगों की पहचान नहीं और मुसलमान को तो इसके लिये पैदा ही नहीं किया गया। इस्लाम का इतिहास बताता है कि सख़्त से सख़्त हालात में अल्लाह तआला ने ऐसे उलमा, रासेख़ीन और दर्दमन्द लोग पैदा किये जिन्होंने हालात का रुख़ बदल दिया। जो चीज़ वहम व गुमान में न आती हो वो उन हिम्मतवालों और अल्लाह के ख़ास बन्दों ने अल्लाह की तौफ़ीक़ से कर दिखाई।

तातारियों के वहशियाना हमले ने मुसलमानों की कमर तोड़ दी थी और लगता था कि अब उनको कोई हरा नहीं सकता है। ये वाक्य उस समय मुहावरे का रूप ले चुका था कि, "अगर कहा जाए कि तातारियों को पराजय होगी तो ये बात बिल्कुल स्वीकार न करना।" मगर अल्लाह ने उनके मुक़ाबले के लिये कुछ लोगों को खड़ा कर दिया और एक ऐसा अजीब वाक़्या पेश आया जिसके नतीजे में पूरी एक तातारी शाख़ मुसलमान हुई और उन्हीं में से फिर ऐसे विजयी दृढ़ इच्छा शक्ति वाले शासक पैदा हुए जिन्होंने सल्तनतों की बुनियाद डाली।

इतिहास में ये घटना है कि तैमूर के शाख़ का एक उत्तराधिकारी शिकार के इरादे से निकला। उस समय ये मशहूर था कि ईरानी मनहूस होते हैं। यदि किसी ईरानी पर निगाह पड़ गयी तो शिकार नहीं मिल सकता। उत्तराधिकारी ने घोषणा करा दी कि शिकारगाह में कोई न आने पाये। अल्लाह का निज़ाम की जब वह निकला तो शेख़ जमालुद्दीन ईरानी कहीं तशरीफ़ ले जा रहे थे। उन पर उत्तराधिकारी की निगाह पड़ी। वो हुलिये से पहचान गया कि ये ईरानी हैं। वो ग़ुस्से से पागल हो गया और उनको बुलवाकर ग़ुस्से से कहने लगा कि तुम बेहतर हो या हमारा कुत्ता बेहतर है। उन्होंने बड़े ठण्डे अन्दाज़ से कहा कि अभी इसका फ़ैसला नहीं हो सकता। उसने कहा कि ये क्या बात हुई, अभी जवाब दो इस पर उन्होंने न जाने किस दर्द से फ़रमाया कि, मेरा ख़ात्मा ईमान पर हुआ तो मैं बेहतर वरना ये कुत्ता बेहतर। उनकी ये बात उस पर तीर की तरह लगी। उसने सवाल किया कि ईमान क्या होता है? बस उनको मौक़ा मिल गया और उन्होंने इस्लाम की इस प्रकार से व्याख्या की कि इस्लाम उसके दिल में बस गया। उसने कहा कि मेरी ताजपोशी क़रीब है, उस वक़्त आप तशरीफ़ लाएं, मैं उस वक़्त इस्लाम का ऐलान करूंगा, तो उसका असर पड़ेगा। इतिहास में लिखा है कि शेख़ को इसका मौक़ा नहीं मिल सका, इन्तिक़ाल के वक़्त उन्होंने अपने बेटे को इस बात की वसीयत की और उन्होंने ताजपोशी के बाद दरबार मे उपस्थित होकर वह घटना याद दिलायी और उस समय पूरी तातारी शाख़ अपने हल्क़े के साथ इस्लाम क़ुबूल कर लायी।

है अयां यूरिश तातार के अफ़साने से   पासबां मिल गये काबे को सनम ख़ाने से

इस प्रकार की घटनाओं से मुसलमान को सबक़ लेने की आवश्यकता है। हालात दुनिया के हों या उसके देश के और चाहे जितने सब्र की आज़माइश करने वाले हों, अगर हम अपनी हक़ीक़त पर क़ायम रहे। अपनी आवश्यकताओं को महसूस करके उनकी चिन्ता में लगे रहे और ज़िन्दगी को हमने सही रुख़ पर क़ायम रखा तो अल्लाह तआला का वादा है कि हक़ का ये चिराग़ केवल जगमगाता रहेगा बल्कि सारी दुनिया में उसकी रोशनी फैलेगी। "किसी भी क़ौम के साथ जो भी है अल्लाह उसको उस वक़्त तक हरगिज़ नहीं बदलता जब तक कि वो ख़ुद अपने अन्दर बदलाव न पैदा कर लें।" (सूरह रअद:11)

मुसलमान अपनी हैसियत को पहचानें

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

"इस उम्मत का इतिहास विभिन्न युगों से गुज़रा है। हमारे ख़्याल में और कोई उम्मत इस तरह के मुश्किल दौर से नहीं गुज़री जिसको तरह–तरह के मुश्किल हालात से गुज़रना हुआ। अरब के एक बड़े विचारक भारत आये थे, उन्होंने अपनी एक तक़रीर में कहा था कि मुसलमान उम्मत की हैसियत से कई बार ऐसे बुरे हालात से गुज़री है कि उसमें अगर उम्मत ख़त्म हो जाती तो कोई ताज्जुब की बात नहीं थी और वाक़्या भी यही है। तातारियों का वाक़्या देख लें कि बग़दाद में उन्होंने क्या हाल किया था। वो सब इतिहास की किताबों में सुरक्षित है। इसी तरह और भी घटनाएं हैं, लेकिन इस उम्मत को अल्लाह तआला ने ऐसी विशेषता दी है कि ये बार–बार उभरती है, और अपनी जगह बनाती है। वास्तविकता ये है कि बहुमत व अल्पमत की समस्या कोई बड़ी समस्या नहीं है, समस्या है अपनी योग्यताओं को सही रूप से लगाने का और मामले को सही तौर से समझने का और उसका हल पेश करने का। आप अगर देखेंगे तो बहुत छोटी–छोटी अक़्लियतें बड़ी सफल और नेतृत्व योग्यताओं की गुज़री हैं और उन्होंने बड़े–बड़े काम किये हैं। इसलिये कि अल्पसंख्यकों को जब ये एहसास होता है कि हम कम में है तो वह मेहनत ज़्यादा करती हैं और ज़्यादा सूझ–बूझ का सुबूत देती हैं और हालात को देखकर काम करती हैं। बहुसंख्यकों में ये बात नहीं होती उनको गुरूर व घमन्ड होता है कि हम ज़्यादा हैं जो चाहेंगे वो करेंगे। इसलिये उसको नुक़सान पहुंचता है और अल्पसंख्यकों को एहसास होता है कि अगर हम मेहनत नहीं करेंगे और हालात को देखकर उपाय नहीं करेंगे, तो हम नुक़सान उठांएगे। हम मुसलमानों को ज़्यादा सूझ–बूझ और मेहनत से काम करना होगा। अल्लाह तआला ने मुसलमानों को श्रेष्ठ योग्यताएं दी हैं, यदि उन योग्यताओं से वे काम लें तो सभी क़ौमों में वे योग्य हो सकते हैं।"

दूसरी बात ये कि जो काम करता है और ज़्यादा अच्छा करता है तो उसको लोग मानते हैं। ऐसा नहीं है इन्सान, इन्सान है, कितना ही बुरा हो, लेकिन अच्छाई को वह मानेगा कि अच्छाई, अच्छाई है, बुराई बुराई है। ऐसा नहीं हैं कि पुण्य को आदमी पाप समझे, ये कोई नहीं करता। पाप में पड़ तो सकता है लेकिन उसका दिल उसको पाप ही समझता है। जब किसी की अच्छाई सामने आती है, तो उसको दुनिया मानती है, यदि उसमें योग्यता है तो उसकी योग्यता से दुनिया लाभान्वित होती है। मुसलमान इस देश में बड़ी भूमिका अदा कर सकते हैं। इसलिये उनको अपनी योग्यता के आधार पर मेहनत करना है, उनको किसी से भीख मांगने की आवश्यकता नहीं, भीख मांगने से काम नहीं चलता। भीख मांगने वाला हमेशा परेशान ही रहता है। अस्ल वह है जो रास्ता निकाले। अपनी परेशानियों से निकलने का बेहतरीन तरीक़ा ढूंढे, लेकिन यह बात शोर–शराबे से नहीं होती, भावनाओं से नहीं हो सकती। इसके लिये होश की आवश्यकता है और इस समय हमारी सबसे बड़ी कमज़ोरी यही है। भारत का मुसलमान किस पोज़ीशन में है और इस पोज़ीशन से हम अपनेआप को किस तरह निकाल सकते हैं, इस बात के हल को अपनाएं। अगर हम इस देश में अक़्ल से काम लें तो हम यहां के नेतृत्वकर्ता की भूमिका अदा कर सकते हैं। इसलिये जो ख़ूबियां हमको क़ुरआन व हदीस और हमारे इतिहास के द्वारा मिली हैं, हम उन शिक्षाओं को अपनाते हुए मेहनत करेंगे तो हम भी दूसरों से आगे बढ़ जायेंगे और जब दूसरों से आगे बढ़ जायेंगे तो दूसरे मजबूर होंगे हमको मानने पर, और हम अपनी राह सही बना सकते हैं।

ये समय लोकतन्त्र का समय है और योग्यताओं को प्रयोग करने का समय है। शाही व्यवस्था समाप्त हो चुकी, हर व्यक्ति को काम करने का अवसर है। वह अपनी योग्यताओं के अनुसार कार्य कर सकता है। जो वह कर सकता है वह करे। ....(शेष पेज 7 पर)

दुआ की अहमियत

मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

कुरआन की आयतें और हदीस के भण्डार दुआ व मुनाजात की अहमियत महत्व और आवश्यकता से भरे पड़े हैं। इसीलिये हमारे बुजुर्गो ने दुआ का इहतिमाम किया। उनके दिन व रात दुआ व मुनाजात से भरे और उनके ज़बाने दुआ के कलिमों से तर रहती थीं।

आज दुआओं का जो सरमाया हमारे पास है वह हमारे बुजुर्गों के एहतिमाम और ताल्लुक़ का नतीजा है। सहाबा किराम रज़ि0 ने हुज़ूर अकरम स0अ0 की मुबारक ज़बान से जो दुआंए सुनी थीं वह अपने बाद वालों को बिना किसी कमी के हवाले कर दीं। इस तरह ये भण्डार हम तक बग़ैर किसी कांट—छांट के पहुंच गया और क्योंकि ये वो दुआंए हैं जो अल्लाह के सबसे मक़बूल (स्वीकार्य) बन्दे, अल्लाह के महबूब ने अपनी ज़बान से अदा फ़रमायी हैं इसलिये उन्हीं शब्दों का प्रयोग दूसरे शब्दो से बहुत हद तक श्रेष्ठ है और दुआओं के क़ुबूल होने का ज़मानतदार है और उन शब्दों के पढ़ने से जो सवाब और बरकत है वह और बेहरत हैं।

दुआ बन्दगी और बन्दे होने का निशान और आजिज़ी व इन्किसारी का इज़हार है। दुआ इबादत की रूह और उसका निचोड़ है। दुआ मोमिन का हथियार और उसकी ढ़ाल है। दुआ अल्लाह के ख़ज़ाने की कुन्जी और अल्लाह की रहमत का साधन है। दुआ मग़फ़िरत का ज़रिया और तौबा की क़ुबूलियत का दरवाज़ा है। ग़रज़ दुआ हर मर्ज़ की दवा और हर दर्द का इलाज है। इसीलिये फ़रमाया गया कि जो उससे मांगे वह उससे राज़ी होता है और जो न मांगे उससे नाराज़, और फिर मांगे तो इस तरह मांगे कि देने वाली ज़ात सिर्फ़ उसी की है। मायूसी न हो, मांगे और मांगता चला जाये, न मांगने से थके और न उसकी शाने रहीमी व करीमी से उसकी निगाह हटे। आज नहीं तो कल मिलेगा, ज़रूर मिलेगा। लेकिन हिकमत व मसलहत के तक़ाज़े से कुछ देर हो सकती है। जो हक़ीक़त में हमारे लिये ही ख़ैर की वजह होगी।

दुआ इस भौतिक दौर में रूहानियत का चिराग़ है। इस ख़ुदा फ़रामोशी बल्कि ख़ुद फ़रामोशी के ज़माने में याद दहानी और स्मरण का बहुत बड़ा साधन है। इसलिये आज बहुत से मजमूओं के ज़रिये दुआ का माहौल बनाने की ज़रूरत है ताकि उसकी बरकतों से पूरी इन्सानियत को नफ़ा पहुंचे और उसके ज़रिये दुनिया व आख़िरत की कामयाबी व ख़ुशहाली नसीब हो।

उलमा व मशाएख़ ने अपने अपने ज़ौक़ व अनुभव के अनुसार दुआओं के मजमूए तैयार किये। आरम्भिक सदियों से लेकर आज तक ये जारी है। न मालूम कितने अल्लाह के बन्दे उन दुआओं के संग्रह से लाभान्वित हुए और अल्लाह की बारगाह में उनके ज़रिये क़रीब हो गये। रसूलुल्लाह स0अ0 ने अलग—अलग वक़्तों की अलग—अलग दुआएं बातयी हैं। ज़माने की छूट, हालत व तक़ाज़े का लिहाज़, मज़ाज व ज़ौक़ जैसी भिन्नताओं को सामने रखने से दुआओं में भी भिन्नता पायी जाती है। सोने की बहुत सी दुआंए हैं। छोटी भी हैं और बड़ी भी हैं। ख़ास भी है और आम भी हैं। जिसका जो मिज़ाज हो और जिसके लिये जितना आसान हो वह उस पर अमल कर सकता है।

दुआ करना और अपने अल्लाह से मांगना अल्लाह वालों का बहुत महबूब और पसंदीदा अमल रहा है और क्यों न हो, क्यों कि अल्लाह तआला को भी अपने बन्दों का ये काम बहुत पसंद है। बल्कि जो उससे न मांगे उससे वो नाराज़ होता है जिसको अल्लाह तआला दुआ की तौफ़ीक़ अता फ़रमा देता है उसको जीने का सलीक़ा आ जाता है। आख़िरत के लिये काम करना आ जाता है और तरक्क़ी की राह दुआ की तौफ़ीक़ व दुआ की किफ़ायत के अनुसार बढ़ा दी जाती हैं। अल्लाह तआला तौफ़ीक़ और ख़ास फ़ज़ल से हम सबको ये नेमत अता फ़रमाये।

लेकिन ये चीज़ उम्मत के लोगों में कमज़ोर होती जा रही है। इसकी ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। बल्कि अल्लाह के अलावा औरों से मांगना, फ़रियाद करना, क़ब्रों पर जाकर पड़े रहना, उनको हाजत रवा, मुश्किल कुशा, और काम बनाने और बिगाड़ने वाला जानना जो खुला हुआ शिर्क है। मुसलमानों में बहुत आम हो रहा है । अल्लाह तआला तौबा की तौफ़ीक़ दे और तौहीद के अक़ीदे को अपनाने की तौफ़ीक़ से नवाज़े जिसका एक मज़बूत ज़रिया अल्लाह तआला से दुआ मांगना है। इस तरह कि उससे दुआ करना उन विशेषआतों के साथ जो उसने ख़ुद अपने लिये साबित किये हैं ये चीज़ मक़बूल दुआओं को समझकर पढ़ने से हासिल हो जाती है।

इस्लामी अक़ीदा

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

क़यामतः

दुनिया में आने वाला इन्सान एक दिन ख़त्म हो जाता है। जो आया है वो जाने के लिये ही आया है। ये एक ऐसी हक़ीक़त है जिसका इनकार नहीं किया जा सकता है। लेकिन एक दिन ऐसा आने वाला है कि दुनिया ही समाप्त हो जायेगी। जो कुछ है सब कुछ बिखर कर रह जायेगा। वह क़यामत का दिन होगा, जिस अल्लाह के हुक्म से सूर फूंका जायेगा तो कोई सांस लेने वाला बाक़ी न रहेगा। फिर क़यामत आ जायेगी। आसमान व ज़मीन, चांद सितारे, सूरज और ये पूरी व्यवस्था तहस—नहस होकर रह जायेगी।

निम्नलिखित आयतों को देखिएः

"जब आसमान फट जायेगा और जब सितारे बिखर जायेंगे, और जब समन्दर उबाल दिये जायेंगे और जब क़ब्रों को उथल—पुथल कर दिया जायेगा (उस वक़्त) एक एक शख़्स को मालूम हो जाएगा कि उसने क्या भेजा क्या छोड़ा।" (सूरह इन्फ़ितारः 1—5)

"जब सूरज लपेट दिया जायेगा और जब सितारे टूट—टूट कर गिर जायेंगे और जब पहाड़ चला दिये जायेंगे।" (सूरह अत्तकवीरः 1—3)

"बस जब आंखें चुंधयां जायेंगी और चांद गहना जायेगा और सूरज और चांद मिला दिये जायेंगे।" (सूरह क़ियामाः 9)

"उस दिन आसमान तलछट की तरह होगा और पहाड़ रूई के रंगीन गालों की तरह होंगे।" (अल मआरिजः 8—9)

"फिर जब एक ही दफ़ा सूर फूंकी जायेगी, और ज़मीन और पहाड़ को उठाकर एक ही बार में चकनाचूर कर दिया जायेगा, तो उस दिन पेश आने वाली चीज़ पेश आयेगी, और आसमान फट पड़ेगा, उस दिन वह फुसफुसा होगा।" (अल हाक़्क़ाः 13—16)

"जिस दिन ज़मीन और पहाड़ लरज़ कर रह जायेंगे और पहाड़ भरभराती रेत के तोदे बन जायेंगे।" (सूरह मुज़्म्मिलः 14)

"फिर जब आसमान फट पड़ेगा तो तलछट की तरह सुर्ख़ हो जाएगा।" (सूरह रहमानः 38)

"जिस दिन ज़मीन ये ज़मीन न रहेगी और (न) आसमान (ये आसमान होगा) और एक ज़बरदस्त अल्लाह के सामने सब की पेशी होगी।" (सूरह इब्राहीमः 48)

सब कुछ फ़ना होने के बाद दूसरी बार सूर फूंकी जायेगी तो सब क़ब्रों से निकल खड़ें होंगे, इसीलिये इस को यौमुल बअस कहा गया है, अल्लाह तआला फ़रमाता है, "फिर उसमें दोबारा सूर फूंकी जायेगी, बस वह पल भर में खड़े होकर देखने लगेंगे।" (सूरह जुमरः 68)

दूसरी जगह अल्लाह तआला हश्र के बारे में इन्सानी ज़हन के एतबार से मिसाल देकर फ़रमाता हैः

"ऐ लोगों! अपने रब से डरो, यक़ीनन क़यामत का भूंचाल एक बड़ी चीज़ है, जिस दिन तुम उसको देखोगे कि हर दूध पिलाने वाली अपने दूध पीते बच्चे को भूल जायेगी और हर गर्भवती औरत अपने गर्भ को गिरा देगी और आपको नज़र आयेगा कि लोग मदहोश हैं जबकि वे मदहोश न होंगे अलबत्ता अल्लाह का अज़ाब है ही बड़ी सख़्त चीज़, और लोगों में कुछ हैं जो अल्लाह के बारे में बग़ैर जाने बूछते झगड़ते हैं और हर सरकश शैतान के पीछे चल देते हैं, जिसके लिये तय है कि जो कोई उसको दोस्त बनाएगा तो वो उसको बहका देगा और भड़कती हुई (दोज़ख़ के) अज़ाब तक पहुंचा देगा, ऐ लोगों! अगर तुम्हें उठाए जाने में शक है तो (ग़ौर करो) हमने तुमको मिट्टी से फिर मनी से, फिर ख़ून के टुकड़े से फिर बोटी से पैदा किया पूरी तरह बनाकर और पूरी तरह न बनाकर भी ताकि तुम्हारे लिये हम बात खोल दें और रहमों में हम जिसको जितना चाहते है एक मुद्दत तक के लिये ठहराते हैं, फिर तुम्हें बच्चा बनाकर निकालते हैं ताकि फिर तुम भरी जवानी को पहुंच जाओ और तुममे कुछ उठा लिये जाते हैं और बाज़ निकम्मी उम्र तक पहुंच जाते हैं कि जानते बूझते भी कुछ समझते नहीं और ज़मीन को तुम देखोगे कि वो ख़ुश्क़ है फिर जब हमने उस पर बारिश की तो लहलहा गयी और बुर्गबार लायी और हर क़िस्म के खुश मन्ज़र पौधे उसने उगा दिये, ये (सब उसी लिये है) कि अल्लाह ही हक़ है और वही मुर्दों का ज़िन्दा करेगा

और वह हर चीज़ पर ज़बरदस्त ताक़त रखता है, और क़यामत आकर रहेगी इसमें कोई शुब्हा नहीं और अल्लाह उन सबको उठाएगा जो क़ब्रों में हैं।" (सूरह हजः 5–8)

हज़रत आदम अलै0 से लेकर क़यामत तक जो भी दुनिया में आया है सबको उस दिन एकत्र किया जायेगा। इसलिये इसको क़ुरआन मजीद में "यौमुल जमा" भी कहा गया है, यानि जमा होने का दिन। "यौमुल ख़ुरूज" भी इसको कहा गया कि क़ब्रों से निकलने का दिन है। सूरह ज़लज़ला में इरशाद होता हैः

"जब ज़मीन अपने भूंचाल से झंझोड़ कर रख दी जायेगी, और ज़मीन अपने बोझ बाहर निकाल देगी, और इन्सान कहेगा कि उसको हुआ क्या है, उस दिन वो अपनी सारी ख़बरें बता देगी कि आपके रब ने उसको यही हुक्म दिया होगा उस दिन लोग गिरोह दर गिरोह लौटेंगे ताकि उनको उनके सब काम दिखा दिये जाएं, बस जिस चीज़ ने ज़र्रा बराबर भी भलाई की होगी वह उसको देख लेगा और जिसने ज़र्रा बराबर भी बुराई की होगी वह उसको देख लेगा।" (सूरह ज़लज़लाः 1–8)

क़ुरआन मजीद की एक पूरी सूरह भी सूरह क़यामा के नाम से नाज़िल हुई है जिसमें बड़ी–बड़ी हक़ीक़तों को छोटी–छोटी आयतों में बड़ी बलाग़त के साथ बयान किया गया है, इरशाद होता हैः

"अब मैं क़यामत के दिन की क़सम खाता हूं, और मलामत करने वाले नफ़्स की क़सम खाता है, क्या इन्सान ये समझता है कि हम उसकी हड्डियों का जमा नहीं करेंगे क्यों नहीं हम उस पर पूरी क़ुदरत रखते हैं कि उसके पोर–पोर को ठीक कर देंगे, बल्कि इन्सान तो चाहता हैं कि वह अपने आगे भी ढिटाई करता रहे, पूछता है कि क़यामत का दिन कब है, बस जब आंखे चुंधयां जायेगी, और चांद गहना जायेगा, और सूरज और चांद मिला दिये जायेंगे, उस दिन इन्सान कहेगा कि अब बचाव की जगह कहां है, हरगिज़ नहीं! अब पनाह की कोई जगह नहीं, उस दिन आपके रब के सामने ही (हर एक को) ठहरना है, उस दिन इन्सान को जो कुछ उसने आगे पीछे किया है, सब जतला दिया जायेगा बात ये है कि इन्सान को जो कुछ उसने आगे पीछे किया है सब जतला दिया जायेगा बात ये है कि इन्सान ख़ुद अपने आप से ख़ूब वाक़िफ़ है, चाहे अपने बहाने पेश कर डाले।" (सूरह क़यामाः 1–15)

शेष : मुसलमान अपनी हैसियत को पहचाने

इंशाअल्लाह उसके अच्छे परिणाम होंगे। हमें बहुत आशा है। बाक़ी ये जो बयान आते हैं, जिससे हमको तकलीफ़ पहुंचती है, बयान देने वाले समझदार लोग नहीं हैं। वे बचकाना बातें करते हैं। इसलिये कि ये देश विभिन्न क़ौमों और विभिन्न धर्मों का देश है। उसकी सलामती इसी में है कि सब मिलकर काम करें। यदि ये आपस में लड़ेंगे तो सबका नुक़सान होगा। बहुमत कोई बनता ही नहीं। जिसको बहुमत कहते हैं वह अल्पमतों का संग्रह है। उसमें भी अल्पसंख्यक ही हैं। यदि अल्पसंख्यक बहुसंख्यक द्वेष के साथ रहेंगे, तो शहर–शहर बट जायेगा, एक शहर का आदमी दूसरे शहर के आदमी को भी पसंद नहीं करेगा और उसको ग़ैर समझेगा, इससे पूरे देश को नुक़सान होगा। देश बर्बाद हो जायेगा, देश तबाह हो जायेगा। हमें मुसलमानों और ग़ैरमुस्लिमों को समझाने की आवश्यकता है कि जो क्षेत्रीय धार्मिक पक्षपात है ये देश के लिये ख़तरनाक है। इससे बहुसंख्यकों को भी लाभ नहीं होगा। बीस करोड़ मुसलमान हैं, यदि देश का इतना बड़ा हिस्सा बेकार है और उसकी योग्यताओं से आप लाभान्वित नहीं होंगे तो देश का लाभ है या नुक़सान।

अमरीका में तो ये था कि अगर कोई बच्चा पैदा तो वे कहते थे कि हमारी इतनी ताक़त बढ़ गयी। ये जब बड़ा होगा तो देश को इससे फ़ायदा होगा। देश का इतना बड़ा वर्ग, यदि उसकी योग्यताओं से देश लाभ न उठाए तो ये देश के लिये हानिकारक है। सब मिलकर चलेंगे तो देश की उन्नति होगी, बल्कि मज़बूत होगा। विशेषतयः भारत के लिये आवश्यकत है। इसलिये कि ये देश एक क़ौम का नहीं है, एक धर्म का नहीं है। यहां सब मिलकर सारे फ़िरक़े व सारे धर्म वाले देश को अपना समझ कर काम करें, तो देश की उन्नति होगी, और इंशाअल्लाह इस बात को सब समझेंगे। लोग बड़ी–बड़ी बात करते हैं, छेड़ने की, वे भी आख़िरकार समझेंगे, इसलिये कि वे जो कुछ कहते हैं वे कर नहीं सकते, वो समझ में न आने वाली बात है। औलाद का पैदा करना, अल्पसंख्यकों को वंचित करना, उनको स्वयं पता चल जायेगा कि ये चीज़े चलने वाली नहीं हैं और इसमें सफलता नहीं होगी। ये धर्मनिरपेक्ष देश है और धर्मनिरपेक्ष ही रहने में इसको फ़ायदा है और इसकी उन्नति है।

नमाज़ के वक़्त

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

इस्लाम में तौहीद के अक़ीदे के बाद इबादतों में सबसे ज़्यादा अहमियत नमाज़ की है। हदीस शरीफ़ में आता है कि दीन की बुनियाद पांच चीज़ों पर है। फिर कलिमा शहादत के बाद उन पांच चीज़ों में सबसे पहले नमाज़ के बारे में बताया गया है। नमाज़ वो इबादत है जिसको सभी इबादतों से पहले आप स0अ0 के आने के पांचवे साल में ही मेराज की रात में फ़र्ज़ कर दिया गया था। हज़रत अनस रज़ि0 फ़रमाते है, "नबी करीम स0अ0 पर मेराज की शब में पचास वक़्त की नमाज़ फ़र्ज़ की गयी थी, फिर कम करके पांच कर दी गयीं, फिर बताया गया: ऐ मुहम्मद! मेरे यहां कलाम में बदलाव नहीं किया जाता है, आपको इन पांच के बदले पचास (का सवाब) मिलेगा।" (नसई, तिरमिज़ी)

तिबरानी में हज़रत अब्दुल्लाह बिन क़र्त से रिवायत है कि आप स0अ0 ने फ़रमाया: "क़यामत में सबसे पहले बन्दे से नमाज़ के बारे में पूछा जायेगा, अगर नमाज़ सही रही तो बक़िया सारे आमाल भी ठीक रहेंगे, और नमाज़ में ख़राबी हुई तो सारे आमाल में ख़राबी हो जायेगी।"

मुस्लिम शरीफ़ की एक रिवायत में इरशाद है इस्लाम और कुफ़्र में सीमा रेखा नमाज़ है। क़ुरआन मजीद में नमाज़ की एक ख़ूबी ये बयान की गयी है कि उससे मनुष्य की अन्तरात्मा जाग जाती है, जो उसको बुराइयों और ग़लत कामों से रोकती है। इरशाद होता है: "बेशक नमाज़ बेहयाई और बुराई से रोकती है।"

अगर कोई शख़्स नमाज़ का पाबन्द है उसके बावजूद उसका दिल किसी बुराई में लगा रहता है तो ये इस बात की पहचान है कि उससे नमाज़ पढ़ने में नमाज़ के आदाब व शर्तों में कोई कोताही हो रही है, इसलिये कि जब तक कि नमाज़ की अदायगी उसके आदाब के साथ नहीं की जायेगी उस वक़्त तक नमाज़ की ख़ास बरकतें ज़ाहिर नहीं होंगी। इसलिये अल्लाह तआला ने इसी नमाज़ पर दुनिया व आख़िरत में कामयाबी का वादा किया है, जिसको खुशूअ व खुज़ूअ (पूरे ध्यान से और आदाब का ख़्याल करके) के साथ अदा किया जाये। इरशाद है: "यक़ीनन वो ईमान वाले कामयाब हो गये जो अपनी नमाज़ में खुशूअ व खुज़ूअ करते हैं। (कुछ दूसरी सिफ़ात ज़िक्र करने के बाद फ़रमाया) यही लोग हैं जो वारिस होने वाले हैं, जो जन्नतुल फ़िरदौस के वारिस होंगे, उसी में हमेशा–हमेशा रहेंगे।"

शरीअत ने नमाज़ के कुछ ख़ास वक़्त तय किये हैं। उन वक़्तों में नमाज़ का पढ़ना ज़रूरी है। उन वक़्तों का ज़िक्र अस्पष्ट रूप से क़ुरआन मजीद में भी किया गया है लेकिन हदीसों में इन अस्पष्ट आयतों को स्पष्ट किया गया है। क़ुरआन मजीद में अल्लाह तआला का इरशाद है: "बेशक नमाज़ ईमान वालों पर तय वक़्तों में फ़र्ज़ है।" एक दूसरी जगह अधिक स्पष्टता से इरशाद है:

"और दिन के दोनों सिरों और रात के अलग–अलग हिस्सों में नमाज़ क़ायम कीजिए।" इस आयत में पांचों वक़्तों की तरफ़ इशारा किया गया है, लेकिन आप स0अ0 ने हर नमाज़ के वक़्त की पूरी तरह से हदबन्दी करी दी है। इसी को ध्यान में रखते हुए माहिरीन ने पूरी जन्तरियां बना दी हैं जिनमें आसानी के साथ हर नमाज़ का वक़्त मालूम किया जा सकता है। लेकिन हम हदीस और इस्लामी फ़िक़ की रोशनी में इन अस्ल पहचानों का ज़िक्र करते हैं, जिनको हदीसों में बयान किया गया है, और फ़ुक़्हा (शरीअत के ज्ञाताओं) ने पूरे तौर पर इनको साफ़ कर दिया है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमाया: ज़ोहर का वक़्त उस वक़्त होता है जब सूरज ढ़ल जाये और आदमी का साया उसकी लम्बाई के बराबर हो जाये जब तक कि अस्र का वक़्त न हो जाये, और अस्र का वक़्त सूरज के लाल पड़ने तक रहता है और मग़रिब का वक़्त शफ़क़ (आसमान की लाली जो सुबह को सूरज निकलने से पहले आसमान पर रहती है और शाम को सूरज डूबने के बाद रहती है) के ग़ायब होने तक रहता है और इशा का वक़्त आधी रात तक रहता है और फ़ज्र का वक़्त तुलू फ़ज्र (सूरज के निकलने से पहले आसमान पर उत्तर से दक्षिण की ओर छाने वाली सफ़ेद रोशनी) से सूरज निकलने तक रहता है फिर जब सूरज निकल आये तो नमाज़ से रूक जाओ, इसलिये कि

वो शैतान की सींगो के बीच से निकलता है। (मुस्लिम)

इस हदीस और दूसरी बेशुमार हदीसों से फ़ुक़्हा ने नमाज़ के वक़्त को इस तरह तय किया है।

फ़ज्र का वक़्तः फ़ज्र का सुबह–ए–सादिक़ से शुरू होकर सूरज के निकलने तक रहता है। सुबह–ए–सादिक़ उस रोशनी को कहते हैं जो आसमान के पूरे पश्चिमी हिस्से पर रहती है, इससे पहले एक रोशनी लम्बाई में आधे आसमान तक निकलती है, इसको सुबह काज़िब कहते हैं। फिर जब ये रोशनी ख़त्म होने के क़रीब होती है तो फिर मश्रिक़ी उफ़क़ (पूर्वी आकाश) पर मुन्तशिर (बिखर कर) होकर रोशनी निकलती है, उसको सुबह सादिक़ कहते हैं। (शामीः 1/242–243)

हदीस शरीफ़ में दोनों चीज़ों का ज़िक्र करते हुए आप स0अ0 ने फ़रमायाः तुमको बिलाल की अज़ान (जो सहरी या तहज्जुद के लिये फ़ज्र का वक़्त आने से पहले दी जाती थी और हरमैन में अब भी दी जाती है) और लम्बाई में निकलने वाली रोशनी सहरी खाने से न रोके, लेकिन फैली हुई रोशनी (यानि सुबह सादिक़ हो जाए) तो रुक जाओ। (मुस्लिम, तिरमिज़ी)

फ़ज्र का मुस्तहब वक़्तः फ़ज्र की नमाज़ इसफ़ार में पढ़ना मुस्तहब है। इसफ़ार का मतलब ये है कि रोशनी बढ़ जाये, उजाला फैल जाये। इसलिये कि तिरमिज़ी में हदीस हैः "फ़ज्र का इसफ़ार में पढ़ो, इसलिये कि इसमें अज्र ज़्यादा है, लेकिन इस बात का ख़्याल रखना ज़रूरी है कि देर इतनी न हो जाये कि वक़्त चला जाये और नमाज़ ख़राब हो जाये। इससे बेहतर ये है कि नमाज़ की शुरूआत सूरज निकलने से इतना पहले करे कि सुन्नत के मुताबिक़ किराअत की जाये। फिर अगर इसी वजह से नमाज़ ख़राब हो जाये तो इतना वक़्त रहे कि सुन्नत के तरीक़े से दोहराव भी हो सके, अगर पच्चीस तीस मिनट पहले नमाज़ शुरू की जाये तो इंशाअल्लाह उतना वक़्त रहेगा।" (शामीः 1/269)

ये माना जाता है कि इसफ़ार को इसलिये अफ़ज़लियत है कि इसमें जमाअत में इज़ाफ़ा हो जाता है। लिहाज़ा अगर किसी वजह से जमाअत के ज़्यादातर लोग अव्वल वक़्त में फ़ज्र पढ़ने पर हो जैसा कि रमज़ान में आम तौर पर ऐसा होता है या किसी मस्जिद के अक्सर नमाज़ी तहज्जुद गुज़ार हों तो अफ़ज़ल यही होगा कि अव्वल वक़्त ही में ग़लस में ही यानि रोशनी होने से पहले ही फ़ज्र इस पढ़ ली जाये। (मआरिफ़ुल सुननः 2/39)

ज़ोहर का वक़्तः ज़ोहर का वक़्त ज़वाल यानि सूरज ढ़लने से शुरू होता है। इस पर सभी इमामों का इत्तिफ़ाक़ है। इमाम मालिक, इमाम शाफ़ई, इमाम अहमद बिन हम्बल और अहनाफ़ में से साहिबैन के नज़दीक ज़ोहर का वक़्त अस्ल साये के एक मिस्ल हो जाने ही पर ख़त्म हो जाता है। खुद इमाम अबू हनीफ़ा रह0 से एक रिवायत इसी के मुताबिक़ है। बहुत से शेखों ने इसे निष्कर्श घोषित कर दिया है। लेकिन इमाम साहब से एक दूसरी सही रिवायत ये है कि ज़ोहर का वक़्त अस्ल साये कि दो मिस्ल होने तक रहता है। ज़ाहिरुर्रवाया होने की वजह से इमाम साहब के क़ौल के तौर पर यही मशहूर है और अहनाफ़ के यहां अमल इसी पर है। (शामीः 1/264)

लेकिन मशहूर मुहद्दिस और फ़क़ीह मौलाना तक़ी उस्मानी साहब दो मिस्ल वाले क़ौल पर दलील देने के बाद फ़रमाते हैंः "दो मिस्ल पर ज़ुहर का वक़्त ख़त्म होने के सिलसिले में आम तौर पर अहनाफ़ की तरफ़ से यही तीन दलीलें पेश की जाती हैं, लेकिन इन्साफ़ की बात ये है कि इनमें से कोई हदीस भी वक़्त की हदबन्दी पर सही नहीं है। इसके विपरीत हदीसे जिब्राईल में पहले दिन अस्र की नमाज़ मिसले अव्वल पर पढ़ने का ज़िक्र है। इसीलिये ये हदीसें हदीसे जिब्राईल का मुक़ाबला नहीं कर सकतीं। (दर्से तिरमिज़ीः 1/396)

इसीलिये उलमा ने अफ़ज़ल इसको क़रार दिया है कि एहतियातन ज़ुहर की नमाज़ को एक मिस्ल से पहले पढ़ लिया जाये ताकि दोनों नमाज़ो की अदायगी उलमा के इत्तिफ़ाक़ के साथ सही वक़्त पर हो।

ज़ुहर का मुस्तहब वक़्तः ज़ुहर की नमाज़ गर्मियों में देर से पढ़ना अफ़ज़ल है और सर्दियों में अव्वल वक़्त पर पढ़ना अफ़ज़ल है। (शामीः 1/270)

इसलिये कि हदीस शरीफ़ में वारिद हुआ है कि आप स0अ0 जब सख़्त ठन्डक होती, तो अव्वल वक़्त में ज़ोहर पढ़ते थे, और जब सख़्त गर्मी होती थी देर से पढ़ते थे। (बुख़ारी)

..............................(शेष पेज 12 पर)

बदनज़री और उसके नुक़सान

मौलाना यूनुस साहब पालनपुरी

बदनज़री से इन्सान के मन के अन्दर इच्छाओं का तूफ़ान खड़ा हो जाता है और इन्सान भावनाओं की धारा में बह जाता है। उससे तीन बड़े नुक़सान होते हैं।

1– बदनज़री की वजह से इन्सान के दिल में सपनों के महबूब का ख़्याल पैदा हो जाता है। हसीन चेहरे उसके दिल व दिमाग़ पर क़ब्ज़ा कर लेते हैं। वो व्यक्ति जानता है कि उन हसीन शक्लों तक उसकी पहुंच नहीं, मगर उसके बावजूद अकेले में वह ऐसे विचारो से आनन्दित होता है। कई बार तो घन्टों उनके साथ ख़्यालों की दुनिया में बातें करता है। मामला इस हद तक बढ़ जाता है कि:

तुम मेरे पास होते हो गोया।
जब कोई दूसरा नहीं होता।।

बदनज़री के साथ शैतान इन्सान के दिल व दिमाग़ पर सवार हो जाता है और उस व्यक्ति से शैतानी हरकतें करवाने में जल्दी करता है। जिस तरह वीरान और खाली जगह पर तेज़ आंधी अपना असर छोड़ती है उसी तरह शैतान भी उस व्यक्ति के दिल पर अपना असर छोड़ता है ताकि उस देखी हुई सूरत को ख़ूब सजाकर उसके सामने पेश करे और उसके सामने एक ख़ूबसूरत बुत बना दे।

ऐसे लोगों का दिल दिन रात उसी बुत को पूजने में लगा रहता है। वह बेकार की इच्छाओं और अभिलाषाओं में उलझा रहता है। उसी का नाम हवस परस्ती, इच्छा परस्ती और नफ़्स परस्ती है।

अल्लाह तआला का इरशाद है:

"और उसका कहना न मान जिसका दिल हमने अपनी याद से ग़ाफ़िल कर दिया और वह अपनी ख़्वाहिश की पैरवी करता है और उसका काम हद से बढ़ गया है।"

इन ख़्याली माबूदों से जान छुड़ाये बग़ैर न तो ईमान की मिठास नसीब होती है और न अल्लाह के समीपता उत्पन्न होती है।

शायर के अनुसार:

बुतों को तोड़ तख़्युल के हों कि पत्थर के।।

2– बदनज़री का दूसरा नुक़सान ये है कि इन्सान का दिल व दिमाग़ बहुत सी चीज़ों में बंट जाता है। यहां तक कि वो अपने फ़ायदे को भी भूल जाता है। घर में हसीन व जमील, नेक और वफ़ादार बीवी मौजूद होती है, किन्तु उस व्यक्ति का दिल बीवी की तरफ़ आकर्षित ही नहीं होता। बीवी अच्छी नहीं लगती। ज़रा–ज़रा सी बात पर उलझता है। घर के माहौल में बदसुकूनी पैदा हो जाती है। जबकि यही व्यक्ति बेपर्दा घूमने वाली औरतों को ऐसी ललचाई हुई नज़रों से देखता है जिस तरह शिकारी कुत्ता अपने शिकार को देखता है।

कभी–कभी तो ऐसे व्यक्ति का दिल काम में भी नहीं लगता। अगर छात्र है तो पढ़ाई के अलावा हर चीज़ अच्छी लगती है। अगर व्यापारी है तो व्यापार से दिल उकता जाता है। कई घन्टे सोता है मगर सुकून की नींद नहीं आती। देखने वाले समझते हैं कि सोया हुआ है जबकि वो ख़्याली महबूब के ख़्यालों में खोया हुआ होता है।

3– बदनज़री का तीसरा बड़ा नुक़सान ये है कि दिल सही व ग़लत व सुन्नत व बिदअत में तमीज़ करने से आरी हो जाता है। दिल की निगाह की ताक़त छिन जाती है। दीन के इल्म व पहचान से महरूमी होने लगती है। गुनाह का काम उसको गुनाह नज़र नहीं आता। फिर ऐसी सूरत में दीन के बारे में शैतान इसको शक व शुब्हे में डाल देता है। उसे दीनी नेक लोगों से बदगुमानियां पैदा होने लगती हैं, यहां तक कि उसे दीनी शक्ल व सूरत वाले लोगों से ही नफ़रत हो जाती है। वह ग़लत होते हुए भी अपने आप को सही समझता है और आख़िरकार ईमान से वंचित होकर दुनिया से जहन्नम रसीद कर दिया जाता है। अल्लाह हम सब की हिफ़ाज़त फ़रमाये। आमीन!

इस्लाम
महिलाओं के अधिकारों का रक्षक

मुफ़्ती अब्दुल फ़ताह आदिल

महिलाएं आधी मानवता हैं और पूरी मानवता एक ही बाप से पैदा हुई है, जिन्हें हम हज़रत आदम अलै0 कहते हैं। ये पहले नबी ही नहीं बल्कि पहले इन्सान भी हैं और हज़रत आदम अलै0 ही से उनका जोड़ा हज़रत हव्वा अलै0 को पैदा किया गया। जिससे ये बात साफ़ होती है कि औरत अस्ल में मर्द ही का हिस्सा है और उसकी पूर्ति है। अल्लाह तआला का इरशाद है: "ऐ लोगों! अपने परवरदिगार से डरो! जिसने तुमको एक ही जान से पैदा किया और उसी से उसका जोड़ा बनाया और उन दोनों से बहुत से मर्द और औरत फैला दिये।" (अलनिसा: 01) ये आयत मानवता के साम्प्रदायिक बंटवारे और रंग व नस्ल के आधार पर ऊंच–नीच के विचार का समापन करने के अतिरिक्त महिलाओं के प्रति पाये जाने वाले झूठे विचारों की भी काट करती है और ये साबित करती है कि महिलाएं कोई दूसरी तुच्छ व साधारण प्राणि नहीं; अपितु मानवता की विशेषता व श्रेष्ठता से परिपूर्ण पुरूषों का अपना हिस्सा व अंश हैं। अल्लाह तआला ने मर्द–औरत को एक समान महत्व दिया है। दोनों को मुनासिब ज़िम्मेदारियों का अधिकारी बनाया है। कथनी व करनी एवं उस पर दिये जाने वाले गुनाह व सवाब की चर्चा भी बिना किसी अन्तर के की गयी है। सूरह नहल में फ़रमाया गया है: "जो भी व्यक्ति नेक कार्य करेगा; चाहे मर्द हो या औरत, शर्त यह है कि वह मोमिन हो, उसे दुनिया में भी हम पवित्र जीवन बसर करवायेंगे और आख़िरत में ऐसे लोगों को उनके बदले उनके कार्यों के अनुसार बख़्शेंगे।" (अलनहल: 97)

इबादत, मामलात, अच्छा व्यवहार, उत्तम चरित्र, न्याय, अर्थव्यवस्था व सामाजिकता; इन सारी चीज़ों में महिलाओं एवं पुरूषों के बीच समानता का ध्यान रखा गया है; बल्कि कई जगह पर औरतों की प्राकृतिक बनावट को ध्यान में रखकर पुरूषों के मुक़ाबले अधिक ध्यान दिया गया है। आप स0अ0 ने एक बाप को अपनी बेटी की परवरिश और उसकी शिक्षा–दीक्षा का ज़िम्मेदार घोषित करते हुए इस बात की ताकीद भी की कि उसकी शादी की व्यवस्था करे और अगर अल्लाह न करे वो बेवा हो गयी या उसे तलाक़ दे दिया गया तो भी उसकी ज़िम्मेदारी मां–बाप पर ही बतायी है। इसी तरह बाप के मुक़ाबले में मां का दर्जा ज़्यादा दिया। और बाप से ज़्यादा मां के साथ अच्छे व्यवहार पर ज़ोर दिया गया है। इसी प्रकार आख़िरी हज के भाषण के अवसर पर औरतों के साथ अच्छे व्यवहार पर ज़ोर देना ख़ुद इस बात की पहचान है कि इस्लाम में महिलाओं का स्थान कितना श्रेष्ठ है। जहां तक अधिकारों की बात है तो अल्लाह तआला ने मर्द व औरत दोनों के अधिकार एक दूसरे पर रखे हैं। इरशाद है: "औरतों के लिये भी मारूफ़ तरीक़ों पर वही अधिकार है जैसे मर्दों के अधिकार उन पर हैं; यद्यपि मर्दों को उनपर एक दर्जा हासिल है।" (अलबक़रा: 228) पति–पत्नी दोनों को बराबर के अधिकार एवं कर्तव्यों का ज़िम्मेदार घोषित करने के बावजूद अल्लाह तआला ने पति को पत्नी पर साधारण सी श्रेष्ठता दी है और इसका कारण भी दूसरी आयत में साफ़ है कि मर्द पर बीवी बच्चों के पालन–पोषण की ज़िम्मेदारी है और फ़ितरी बात है कि ज़िम्मेदार को उसके मातहतों पर वरीयता प्राप्त होती है: "मर्द औरत की निगरानी करने वाला है, इस आधार पर कि अल्लाह ने उनमें से एक को दूसरे पर श्रेष्ठता दी है और इस आधार पर कि मर्द अपना माल खर्च करते हैं।" (अलनिसा: 34)

इस आयत पर औरतों की नफ़्स की इज़्ज़त और उसकी शराफ़त व वक़ार का पूरा–पूरा लिहाज़ रखते हुए एक एतबार से मर्दों का दर्जा बढ़ाकर उनके कर्तव्यों को बढ़ाया गया है। और पारिवारिक व्यवस्था को चलाने के लिये आवश्यक रू" से हर चीज़ की निगरानी करने वाला बनाया गया है। इसी प्रकार विरासत में औरतों का हिस्सा मर्दों के मुक़ाबले आधा रखने का मामला हो या औरतों का मस्जिदों में जाने का मामला हो या तलाक़ का अधिकार मर्दों को देने की बात हो या बाहर निकलते समय पर्दे का मामला या जुमा जमाअत से या ईद की नमाज़ों से परहेज़, इन सभी मसलों में न औरतों के साथ नाइंसाफ़ी की गयी है और न ही उनको कमतर समझा गया है। बल्कि शरीअत में औरतों के क़ुदरती ज़ुअफ़, उनकी फ़ितरती नज़ाकतों और लताफ़तों को ध्यान में रखकर उनके साथ विशेष छूट का मामला किया है। उनकी जान और उनकी इज़्ज़त को बचाने की कोशिश की गयी है। उनकी प्राकृतिक योग्यताओं का ध्यान रखा गया है और उन्हें कठिनाइयों और परेशानियों से बचाकर उनके लिये आसानियां पैदा की गयी हैं। इसलिये इस पहलू को लेकर मतभेद करने वाले और इस्लाम के ख़िलाफ़ साज़िश करने वालों को ठन्डे दिल से ग़ौर व फ़िक्र करना आवश्यक है; क्योंकि विचार करने के

बाद वो इस परिणाम पर मजबूर हो जायेंगे कि इस्लाम औरतों के अधिकार का वास्तविक रक्षक ही नहीं ध्वजवाहक भी है; इस्लाम ने औरतों को जो आम इन्सानी अधिकार दिये हैं उसका यदि व्यापक रूप से निरीक्षण किया जाये तो निम्नलिखित चीज़ें नुमायां तौर पर सामने आती हैं:

❖इस्लाम ने औरतों की मुस्तक़िल हैसियत को स्वीकार किया है।

❖उसे जायदाद का मालिक बनने और उसमें अपनी मर्ज़ी से ख़र्च करने का अधिकार दिया है।

❖उसे विरोध करने की आज्ञा दी है। और आपस में सहमति व राय बनाने की आज़ादी भी दी है।

❖उन्हें निकाह करने और आवश्यकता पड़ने पर अलग होने की मांग करने की आज़ादी दी है।

❖उसे मर्दों की तरह ज़िन्दा रहने और अपनी इज़्ज़त व आबरू और हया व पाकदामनी के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने की सहूलत दी है।

❖उसे इस बात का भी अधिकार दिया है कि वो किसी को अपनी अमान में ले ले।

❖वह शिक्षा व दीक्षा के क्षेत्र में भी आगे बढ़ने का अधिकार रखती है।

❖वह शरीअत की सीमाओं में रहते हुए नौकरी व व्यापार में भी हिस्सा ले सकती है। इस्लाम किसी भी अवसर पर महिलाओं की उन्नति में रूकावट नहीं बनता, हाँ इतना अवश्य है कि जिन चीज़ों से उसकी जान ख़तरे में पड़ सकती है या उसके दामन पर दाग़ लग सकता है उन चीज़ों से बचाव के उपाय करने में या उसे बदनियत लोगों की हवस की निगाह से बचाने के लिये या उस पर ज़ुल्म व अत्याचार किये जाने व उनको शोषण से बचाने के लिये कोई कसर भी बाक़ी नहीं रखी।

इसलिये बजा तौर पर ये बात कही जा सकती है कि औरतों के लिये इस्लाम रहमत के साये से कम नहीं, काश! इस्लाम पर टिप्पणी करने वाले लोग ठण्डे दिल से सोचे महिलाधिकारों से संबंधित आवाज़ उठाने वाले लोग गंभीरता से अध्ययन करें, औरतों के अधिकार की दुहाई देने वाली संस्थाएं इस्लाम के रहमत के संदेश से नसीहत प्राप्त करें और औरतों की आज़ादी के नाम पर औरतों को बेचने का सामान बनाकर दुकानों, आफ़िसों, क्लबों और होटलों को आबाद करके उनका शोषण करने वाले लोग अपना निरीक्षण करें और इस्लाम की न्यायिक व्यवस्था को स्वीकार करें और इस्लाम के ख़िलाफ़ साज़िशें करने पर शर्मसार हों।

शेष : नमाज़ के वक़्त

जुमा का वक़्तः जुमा का वक़्त भी वही है जो ज़ोहर का है। बस फ़र्क़ इतना है कि इसको गर्मी व सर्दी हर मौसम में अव्वल वक़्त में पढ़ना अफ़ज़ल है।

अस्र का वक़्तः अस्र का वक़्त तीनों इमामों और साहिबैन के नज़दीक एक मिस्ल से और इमाम साहब के नज़दीक दो मिस्ल से शुरू होता है, इसकी तफ़सील हम पीछे कर चुके हैं और इसका आख़िरी वक़्त ग़ुरूब तक रहता है। (शामीः 1/265)

और अस्र का मुस्तहब वक़्त सूरज में बदलाव आने तक रहता है, चाहे गर्मी का मौसम हो या सर्दी का मौसम, फिर जब सूरज में बदलाव पैदा हो जाए तो मकरूह वक़्त शुरू हो जाता है।

मग़रिब का वक़्तः मगरिब का वक़्त सूरज के डूबने से शुरू होता है और शफ़क़ (सूरज डूबने के बाद रहने वाली रोशनी) के गुरूब तक रहता है। तीनों इमामों और साहिबैन के नज़दीक शफ़क़ से मुराद लाली है, जबकि इमाम साहब के नज़दीक शफ़क़ से मुराद वो सफ़ेदी है जो लाली के बाद ज़ाहिर होती है। फ़तवा इमाम साहब के क़ौल पर है, लेकिन एहतियात का तक़ाज़ा ये है कि शफ़क़ अहमर (सुर्ख़ी) से पहले मग़रिब की नमाज़ पढ़ ली जाये।

मगरिब की नमाज़ मे हर मौसम में जल्दी करना मुस्तहब है। (हिन्दियाः 1/53)

इशा का वक़्तः इशा का वक़्त तीनो इमामों और साहिबैन के नज़दीक शफ़क़ अहमर डूबने से है जबकि इमाम अबूहनीफ़ा के नज़दीक शफ़क़े अबयज़ (सफ़ेदी) डूबने से शुरू होता है और तुलू फ़ज्र तक रहता है। एहतियात इसमें है कि शफ़क़े अबीज़ डूबने के बाद ही इशा की नमाज़ पढ़ ली जाये। (हिन्दियाः 1/15, शामीः 1/265–266)

इशा का वक़्त मुस्तहब तिहाई रात की ताख़ीर है, आधी रात तक उसका जायज़ वक़्त है फिर मकरूह वक़्त शुरू हो जाता है। (शामीः 1/270)

जिस शख़्स को भरोसा हो कि तहज्जुद के लिये उठेगा उसके लिये वित्र की नमाज़ तहज्जुद के बाद पढ़ना अफ़ज़ल है, जिसको ये एतमाद न हो तो इशा के बाद ही पढ़ ले। (शामीः 1/271)

अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का दोहरा मापदण्ड

डॉक्टर आमिर लियाक़त हुसैन

फ़्रांस के बेशर्म राष्ट्रपति की मांग है कि “जहां–जहां फ़्रांसीसी झन्डे जलाए गये, वे देश हमसे माफ़ी मांगे।”...... .वाह साहब! आपने ढेड़ अरब मुसलमानों के दिल जला डाले, लेकिन माफ़ी नहीं मांगी, बल्कि उसे ''अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता'' की संज्ञा दी तो फिर अगर किसी ने इसी “स्वतन्त्रता” का प्रयोग करते हुए यदि आपके देश का झन्डा जला दिया तो इस काम पर इतना भड़कने की क्या ज़रूरत है? भाई अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के अपने–अपने तरीक़े हैं। आपको गुस्ताख़ाना कार्टून बनाकर सुकून मिलता है, तो आशिकों को झन्डा जलाकर सुकून पहुंचता है। भड़क कर क्यों “अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता” को बदनाम करते हो। अब अगर कल कोई आपकी तस्वीर पर गन्दगी डाले, या आपके देश को झन्डे को टिशू पेपर बनाकर उससे गन्दगी पोछे तो बुरा मत मानियेगा! आप ही कहते हैं कि दुनिया में हर इन्सान को अपनी मर्ज़ी से जीने का हक़ है, और ये भी कहते हैं कि इस जीने के इज़हार के लिये किसी को अपनी मर्ज़ी का गुलाम नहीं किया जा सकता, तो फिर जीने दीजिए जनाब! फ़्रांस के गन्दे इतिहास और गन्दे मार्गदर्शकों के क़िस्से सुनाने से किसी को न रोकिये! बताने दीजिए कि आपको भी अभी तक अपने बाप का नाम नहीं मालूम है और इस बारे में कई बार आप अज्ञानता प्रकट कर चुके हैं। निजी महफ़िलों में अक्सर आपने अपनी मां पर टिप्पणी की है कि उन्होंने आपको आपके “रियल फ़ादर” का नाम नहीं बताया है, बल्कि वो जिसे आपके पिता का दर्जा देती हैं, आपके अनुसार “आपका मन नहीं करता कि उसे बाप कहूं।”

और ख़ैर इसमे अचम्भे की कोई बात नहीं है। ये तो फ़्रांसीसी सभ्यता की एक प्रकाशमान छवि है, यहां तो कई बच्चे “पिज़्ज़ा वाले” के हैं या फिर किसी टैक्सी ड्राइवर या नाइट क्लब से निकले किसी बेनाम मदहोश की “भावनाओं में बहती ग़लती” का नतीजा!! वैसे सुना है कि डेनमार्क की तरह फ़्रांस में भी किसी बच्चे से उसके बाप का नाम पूछना “बुरा” समझा जाता है, क्योंकि ये उसे शर्मिन्दा करने वाला है एवं उसके “दिल दुखाने” का कारण है और यक़ीनन ये दिल दुखाना ही तो है कि आप एक इन्सान से ऐसा सवाल कर रहे हैं, जिसका जवाब उसे ख़ुद नहीं मालूम। सोचिए! कि आप उसे किस बोझ के तले दबाने का जुर्म कर रहे हैं। वह तो बहुत बड़ी उलझन में पड़ जायेगा, संभव है कि वह अपने सवाल का जवाब जानने के लिये कहीं अपनी जान से हाथ न धो बैठे। ऐसे बेहूदा सवाल करने से पहले कोई फ़्रांस के राष्ट्रपति की जगह स्वयं को रखकर सोचे। एक औलाद के लिये इससे बड़ा दर्द और क्या होगा कि जिसे वह बाप कहता है, वह बाप नहीं है और उसका जो बाप है वो बाप भी यहीं है लेकिन मां नाम बताने का तैयार नहीं। मेरा ख़्याल है कि शायद इसी कैफ़ियत मे पड़कर फ़्रांस के राष्ट्रपति ने कह डाला कि, “मैं शार्ली हूँ।”

फ़्रांसीसी लिखते कुछ हैं और बोलते कुछ हैं और यहीं से उनका दोज़ख़ी होना ज़ाहिर हो जाता है। मुनाफ़िक़त का एक अजीब पैमाना है जिसे उन्होंने ख़ुद बनाया है, ताकि उनके बारे में किसी को भी “खोजबीन की परेशानी” न उठानी पड़े के ये मुनाफ़िक़ हैं या नहीं? भई साफ़ है कि मुझे या आप जैसों को इतनी परेशानी में पड़ने की ज़रूरत ही क्या है? ये तो “मुनाफ़िक़त का ऐलान” है कि “ऐ लोगो! हमारी ज़बान से हमें पहचान लो! हम पर कभी भरोसा नहीं करना, क्योंकि हम कहते पूरब हैं तो करते पश्चिम हैं। यक़ीन न आये तो हमारी क़ौमी ज़बान के मुनाफ़िक़त को ख़ुद बोलकर महसूस करो कि हम लिखते “चार्ली” हैं और पढ़ते “शार्ली” या

"साग़ली" हैं।" यानि ये साबित हुआ कि फ़्रांस के राष्ट्रपति का ये कहना कि "मैं शाग़ली हूँ" वास्तव में अपनी मां को ये संदेश देना है कि अगर आप मुझसे यूं ही मेरे बाप का नाम छिपाती रहीं तो फिर इस नीच, रज़ील से अपनी निस्बत जोड़कर आपको तड़पाऊंगा और लगातार कहे जाऊंगा कि "मैं शार्ली हूँ" ताकि आप तंग आकर मुझे अब्बा का नाम बता दें। और केवल यही नहीं, वे लाखों फ़्रांसीसी भी मेरी आवाज़ में आवाज़ मिलाएंगे, जो मुद्दतों से अपने "असली बाप" की तलाश में हैं।

लीजिए जनाब! हम इस नारे को अकारण ही मुसलमानों से "इज़हारे नफ़रत" समझ रहे हैं। ये तो अस्ल में उनका अपनेआप से नफ़रत का अन्दाज़ है, बेनामी लाखों बच्चे अपने–अपने बाप की तलाश में सड़कों पर निकल आये। शायद इसलिये भी कि उनका नेतृत्व करने वालों में वह "फ़िलिस्तीन का क़साई" भी शामिल था, जिसकी क़ौम ने हमेशा बाप का नाम पूछने को वरीयता दी। और इसमें कोई शक नहीं कि ये उस ही का हक़ है कि ये बाप की खोज में निकले, अश्लीलता के ध्वजवाहकों का परचम थामकर उनका मार्गदर्शन करे!! नबियों के क़ातिलों की क़ौम से संबंध रखने वाले इस बदनियत के पूर्वज ने "इज़हारे बरतरी" के जुनून में पहले साहबे इन्जील मुक़द्दस ईसा मसीह अलै0 को तकलीफ़ दें और अब साहबे कुरआन मुहम्मद स0अ0 को तकलीफ़ देने से बाज़ नहीं आते और इसके लिये ये चुनाव भी उनका ही करते हैं, जो बरसों से **Father's Name** की खोज में लगे हुए हैं। वैसे तो "शार्ली ऐब्दो" के संस्थापक 80 साल के हेनरी रोसेल ने वासिले जहन्नम एडिटर स्टीफ़ेन शार्बोनियर के बारे में खुल के एक साक्षात्कार में कह दिया है कि अपनी व अपने साथियों की मौत का वह स्वयं उत्तरदायी है, क्योंकि उसे कई बार मना किया गया है कि वह इस्लाम के संदेष्टा की तौहीन न करे, लेकिन वह मुसलमानों की भावनाओं को भड़काने वाली अपनी ज़लील पॉलिसी से बाज़ नहीं आया। ब्रिटिश पत्रिका "टेली ग्राफ़" के अनुसार हेनरी रोसेल का ये भी कहना है कि "स्टीफ़ेन के सर में इन्सान का नहीं सुअर का दिमाग़ था, और वो उसी से सोचा करता था।" हेनरी रोसेल ने और कहा कि, "शार्बोनियर एक सहयूनी (**Zionist**) और इस्लामोफ़ोबिया का शिकार था, वह हर समय नफ़रत वाली हरकतों व विरोधी कार्यवाहियों में व्यस्त रहता था और उसी का ख़मियाज़ा उसको व उसके साथियों को भुगतना पड़ा।" अब इसी इन्टरव्यू से आप गुत्थियां सुलझा लीजिए कि "अस्ल पुश्त पनाह" कौन है? किसे फ़्रांसीसी यहूदियों की "नव आबादकारी की आड़" लेकर अब सीमाओं को और बढ़ाने की चिन्ता होगी और कौन अब इसी सिफ़ली अमल की पूर्ति करने के लिये मासूम फ़िलिस्तीनियों और उनके बच्चों के क़त्ले आम का नया जवाज़ तलाश करेगा।

कल तक इसी देश में यहूदियों के ख़िलाफ़ प्रदर्शन हो रहे थे और आज फ़्रांस में यहूदियों से बढ़कर कोई पीड़ित नहीं है!! जब ये शिकार की ख़ातिर अपने पवित्र दिन "सिबत" में वादा ख़िलाफ़ी कर सकते हैं और बहाना तलाश कर जुमा के दिन ही जाल डाल सकते हैं। जब ये किसी भी क़ौम के धर्म का मज़ाक़ उड़ाने से किसी भी सूरत में बाज़ नहीं आ सकते, जो मन व सलवा से उकता जायें और (मआज़ अल्लाह) अल्लाह से भी दो दो हाथ करने और ठट्ठा करने से न कांपे। जब ये मूसा अलै0 का साथ देने से इनकार कर सकते हैं और नसब का शिजरा मर्द की ओर से नहीं बल्कि औरतों की ओर से चला सकते हैं, जब ये अपने आप को अशरफ़ुन्नस्ल क़रार दे सकते हैं और उनकी किताब "तलमूद" के अनुसार उन पर ये अक़ीदा ग़ालिब आ सकता है कि अल्लाह ने ये दुनिया यहूदियों के लिये बनायी है और इसमें मौजूद सब चरिन्द परिन्द यहूदियों की मिल्कियत हैं और इस कायनात पर हुकूमत करने का हक़ सिर्फ़ और सिर्फ़ यहूदियों को है, जिसे पाने के लिये हर हरबा इस्तेमाल करना इबादत है। और जब ये सहयून नामक पहाड़ पर "सहयूनी आन्दोलन" स्थापित कर सकते हैं, ताबूते सकीना की अमानत में ख़यानत कर सकते हैं, वहम परस्ती और वहम को धर्म बनाकर उसकी उपासना कर सकते हैं और जिन्होंने बाक़ायदा दुनिया में आतंकवाद का आरम्भ किया है, इन्सानों पर पहला बारूदी हमला किया हो तो उनसे हर प्रकार के फ़ित्ने की आशंका रखना अतिश्योक्ति नहीं, बल्कि दूरदृष्टि के सिवा कुछ भी नहीं।

सोशल मीडिया पर इस्राईल की शर्मनाक पराजय

जनाब रिज़वान असद

पिछले 65 सालों से फ़िलिस्तीन पर अत्याचार करने वाले इस्राईल को इस बार ग़ज़्ज़ा पर बर्बरता का तांडव महंगा पड़ गया और उसे बुरी तरह मुंह की खानी पड़ी। अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया पर सहयूनियों (यहूदियों) के कन्ट्रोल के कारण इस्राईल के अत्याचार दुनिया की नज़रों से छिपाये जाते थे और इस्राईल के ज़ुल्मों पर पर्दा डाला जाता था। यहां तक कि उल्टा फ़िलिस्तीनियों को बदनाम किया जाता था। लेकिन जब से सोशल मीडिया का चलन हुआ है, तब से झूठा प्रोपगन्डा करने या ग़लत सूचना देने की साज़िशें नाकाम रही हैं। ग़ज़्ज़ा पर इस्राईली अत्याचार को सोशल मीडिया ने बेनक़ाब कर दिया है और दुनिया के सामने वास्तविकता स्पष्ट कर दी हैं। जैसे ही फ़िलिस्तीन के शुजाइया पर इस्राईल ने हमला किया उसके केवल कुछ मिनटो बाद दुनिया भर के पत्रकारों और ट्वीटर्स को इसकी सूचना प्राप्त हो गयी। फ़िलिस्तीनी नागरिकों ने शहीद और ज़ख़्मी बच्चों की तस्वीरें फ़ेसबुक पर डालीं तो उन तस्वीरों ने पूरे विश्व की अंतरात्मा को झिंझोड़ दिया। सोशल मीडिया पर लड़े जाने वाले युद्ध में इस्राईल को शर्मनाक पराजय हुई है। इस्राईल की बरबरता खुली वास्तविकता है जबकि फ़िलिस्तीनियों (हमास) की लड़ाई केवल इस्राईली सेना से थी। हमास ने नागरिकों, मासूम बच्चों और औरतों पर बम नहीं गिराये थे। सोशल मीडिया ने सहयूनी (यहूदी) मीडिया के वर्चस्व को समाप्त कर दिया। दर्जनों फ़िलिस्तीनी नागरिकों को इस्राईली सेना ने शुजाइया पर हमले करके मौत के घाट उतार दिया तो ये ख़बर मिनटों में ट्वीटर पर पूरी दुनिया में फैल गयी। इस्राईल के अत्याचार जो अधिकतर दुनिया की नज़रों से अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया छिपाता रहता था वे सोशल मीडिया के द्वारा रहस्य नहीं रह गये। शुजाइया में इस्राईल ने एम्बुलेंस जाने की आज्ञा न दी तो ये सूचना भी सोशल मीडिया के द्वारा सारी दुनिया को मिनटों में पहुंच गयी। शुजाइया की सभी गलियों में लाशों के ढेर पड़े हुए थे, जिनकी तस्वीरें फ़ेसबुक पर डाली गयीं तो पूरी दुनिया ने इस्राईल की निंदा करना आरम्भ कर दिया। ग़ज़्ज़ा पर इस्राईल के वर्तमान अत्याचार के दौरान बिजली आपूर्ति व्यवस्था तहस–नहस होने के बावजूद फ़िलिस्तीनी नागरिकों ने फ़ेसबुक व ट्वीटर पर मासूम बच्चों की लाशें और बमबारी से तबाह हुए मुहल्लों की तस्वीरें पोस्ट करने का सिलसिला जारी रखा। हालांकि तस्वीरें हमेशा से एक ज़बरदस्त ताक़त रहीं हैं, फिर भी ग़ज़्ज़ा की जंग में उन तस्वीरों के द्वारा हमास ने पहला पड़ाव पार कर लिया और स्थिति की गंभीरता और इस्राईली अत्याचार को सोशल मीडिया के द्वारा दुनिया तक पहुंचाया। दुनिया भर में इस्राईल के विरुद्ध विद्रोह की ऐसी व्यापक लहर चली कि जिसका उदाहरण नहीं मिलता। दुनिया के विभिन्न देशों में जनता ने इस्राईल के विरुद्ध प्रदर्शन किये और अपनी सरकार पर इस्राईल पर कार्यवाही करने के लिये दबाव डाला। ग़ज़्ज़ा के शिफ़ा अस्पताल के एक डॉक्टर बाक़र की 16/साल की बेटी फ़रह बाक़र ने इस्राईल द्वारा की गयी बमबारी के कारण मची हुई तबाही और इन्सानी लाशों की तस्वीरों को ट्वीटर पर डालकर अपने सभी दोस्तों में फैला दिया और उन ट्वीट्स के द्वारा वो लड़की अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्तित्व बन गयी। फ़रह बाक़र ने 1/अगस्त 2014 को "गेस व्हाट" (Guess What) के नाम से अपने ट्वीटर एकाउन्ट पर एक वीडियो क्लिप लोड की जिसमें बम के धमाकों की आवाज़ें सुनी जा सकती हैं और आग और धुएं के बादल उठते देखे जा सकते हैं। 8/अगस्त 2014 को उसने अपनी ट्वीट में बताया कि एक मस्जिद पर बमबारी के कारण एक बच्चा शहीद हो गया और कई लोग घायल हो गयें हैं। ....(शेष पेज 19 पर)

समाज सुधार का प्रयास

मसऊद अहमद आज़मी

समाज के सुधार के लिये हर गंभीर मुसलमान चिन्तनीय है। जिस मुसलमान के अन्दर कुछ सूझ–बूझ और होशमन्दी के आसान नज़र आयेंगे, उसकी बातों से समाज की दिन प्रतिदिन होने वाली बुराइयों पर फ़िक्र व चिन्ता भी झलकती हुई नज़र आयेगी। लेकिन ख़राबियां हैं कि सैलाब की तरह उमड़ती ही चली आ रही हैं और वे किसी तरह रुकने का नाम नहीं ले रही हैं। अगर सच्चाई से नज़रे न चुराई जायें और वर्तमान हालात पर निगाह डाला जाये तो उनको बढ़ने से रोकना संभव भी नहीं है। क्योंकि उनको बुरा समझने वाले और उनकी तरफ़ से शक में पड़े रहने वाले तो बहुत थोड़े से लोग हैं और उनको जन्म व बढ़ावा देने में दुनिया की बहुत सारी ताक़ते, बड़ी–बड़ी कम्पनियां और बेशुमार दिमाग़ लगे हुए हैं। इसके लिये बेपनाह पूंजी ख़र्च की जाती है। इसका परिणाम ये है कि अराजकता के कीटाणु हमारे समाज समाज के जिस्म में हड्डियों तक पहुंच गये हैं। जो उसको दीमक की तरह अन्दर ही अन्दर चाटते चले जा रहे हैं।

इन हालात के कारण हर व्यक्ति परेशान है और परेशान होना स्वाभाविक है इसलिये कि किसी को भी अपना माहौल सुरक्षित नज़र नहीं आ रहा है। यदि कोई घर या जगह सुरक्षित है तो कब तक बचा रहेगा, कुछ कहा नहीं जा सकता है।

बुराई और ज़लालत व गुमराही तो इस ज़मीन पर हमेशा से रही है और जैसे जैसे दुनिया ख़ात्मे के क़रीब होती जायेगी, ये चीज़ें और बढ़ती जायेंगी। उनके घटने और कम होने की तो कोई संभावना ही नही है। यद्यपि मुसलमानों का काम ये है कि उनसे बचने और अपने परिवार को बचाने की भरपूर कोशिश करे।

"अच्छी बात का हुक्म देना और बुरी बातों से रोकना" इस्लाम का एक कर्तव्य और उसकी बहुत ही महत्वपूर्ण शिक्षा है कुरआन करीम के अन्दर बहुत ही अहमियत से इसको बयान किया गया है। इस ज़िम्मेदारी को अदा करने की तालीम दी गयी है। और इसकी योग्यता रखने वाले मुसलमानों को कम से कम अपने असर के दायरे तक इसको अन्जाम देने की सख़्त ताकीद की गयी है। रसूलुल्लाह स0अ0 ने भी इसकी सख्त ताकीद फ़रमायी है। आप स0अ0 का इरशाद है: "यानि तुममे से जो शख़्स कोई बुराई देखे तो उसको चाहिये कि अपने हाथ से रोके, अगर हाथ से रोकने की ताक़त न हो तो ज़बान से रोके, अगर ज़बान से भी न रोक सकता हो तो दिल से बुरा समझे और ये ईमान का सबसे कमतर दर्जा है।" अल्लाह के रसूल स0अ0 के इस इरशाद से मालूम होता है कि ईमान का कम से कम दर्जा ये है कि बुराई को अपने दिल से बुरा समझे। अगर दिल से भी बुरा न समझा जाये तो गोया कमज़ोर दर्जे का ईमान भी नहीं है।

इस हदीस में बहुत अहमियत व ताकीद के साथ ये तालीम दी गयी है कि हर मुसलामन को बुराई को रोकने की कोशिश करनी चाहिए। यद्यपि हर शख़्स का एक असर का दायरा और एक योग्यता होती है और उसका लिहाज़ करते हुए इस ज़िम्मेदारी को अदा करने की चिन्ता करनी चाहिये। ज़्यादा नहीं 20–30 साल पहले गावों में ये रिवाज था कि मुहल्ले का कोई भी बड़ा आदमी किसी लड़के या छोटे को ग़लत काम करते हुए देखकर रोक–टोक कर दिया करता था। लेकिन आज वह माहौल नहीं है। आज कोई आदमी किसी दूसरे के लड़के को उसकी ग़लती पर टोक दे तो लड़ाई झगड़े की नौबत तक आ जाये।

दिन प्रतिदिन बढ़ती हुई बुराई से अपने आप को और अपने घर को बचाने का इसके अलावा कोई रास्ता नहीं है कि हर व्यक्ति कम से कम अपने घर की चिन्ता करे। अपनी औलाद पर निगाह रखे। उनकी ऐसी तरबियत की कोशिश करे जैसी इस्लाम चाहता है। हमारा माहौल ये है कि समाज की बढ़ती हुई बुराइयों को देखकर परेशानी का इज़हार तो करते हैं उनके असर से हमारे चेहरों पर चिन्ता के आसार तो अवश्य पड़ते हैं लेकिन जब इसके लिये क़दम उठाने की आवश्यकता होती है तो उससे अधिकतर निगाहें चुरा जाते हैं। हालांकि कम से कम इतना तो हर व्यक्ति कर सकता है कि अपनी औलाद और अपने बच्चों को बुरे काम से रोक सकता है और भली बात का हुक्म दे सकता है। अगर इतना भी मुसलमानों को एहसास हो जाये तो अल्लाह की ज़ात से उम्मीद है कि हमारी हालतों को बदल देगा। हम इस समय जो सामाजिक और आर्थिक रूप से तबाही के निकट होते जा रहे हैं, इससे कुछ नजात मिलने की उम्मीद नज़र आने लगेगी।

गुआन्तानामो बे
GUANTANAMO BAY

मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

(Guantanamo Bay Detention Camp) यानि गुआन्तानामो बे का जंगी क़ैद ख़ाना जो अमरीका की दरिन्दगी व हैवानियत की एक खुली हुई मिसाल है। ये क़ैदख़ाना क्यूबा (Cuba) के गुआन्तानामो नामक क्षेत्र में स्थित है। इस क़ैदख़ाने को गिटमो (Gitmo) और जी–बे (G-Bay) के नाम से भी जाना जाता हैं।

पश्चिमी मीडिया के अनुसार इस जेल की स्थापना 11/जनवरी 2002ई0 में बुश सरकार की निगरानी में अमरीकी मेजर जनरल 'मिशेल लेहनर्ट' की अध्यक्षता में हुआ था।

अमरीकी रक्षा सेक्रेट्री डोनाल्ड रम्सफ़ील्ड ने अपने बयान में कहा था कि इस क़ैदख़ाने की स्थापना उन ख़तरनाक जंगी क़ैदियों के लिये है जो बहुत ही संगीन अपराध में लिप्त हो और देश की सुरक्षा के लिये बहुत ही ख़तरनाक हो। इसीलिये उनको क़ैद करना और उनके सुधार की कोशिश करना ज़रूरी है। इसी उद्देश्य के लिये ये जेल स्थापित किया गया है। लेकिन पर्दे के पीछे की हक़ीक़त मुसलमानों को विभिन्न संदर्भों में गिरफ़्तार करके इस क़ैद ख़ाने में लाना, उन्हें दर्दनाक ज़हनी व जिस्मानी तकलीफ़ें देना और ज़ुल्म व ज़्यादती के नये–नये अनुभव करना था। अतः 9/11 की घटना के बाद अमरीका ने इस्लाम के ख़िलाफ़ सलीबी जंग का ऐलान कर दिया और फिर ख़ासकर अफ़ग़ानिस्तान और इराक़ के मुसलानों की गिरफ़्तारी और उनके ख़िलाफ़ कार्यवाही का सिलसिला शुरू हुआ। विभिन्न क्षेत्रों से बेगुनाहों को गिरफ़्तार किया जाता और फिर इस जेल में सलासिल का पाबन्द कर दिया जाता जिनमें से अक्सर के पास कोई ठोस सुबूत नही होता।

विकीलीक्स ने स्वीकार किया है कि गुवान्तानामोबे में क़ैद अक्सर क़ैदी वो हैं जिनके ख़िलाफ़ अमरीका ने केवल शक के आधार पर कार्यवाही की है। इन संस्थाओं के नज़दीक ये बात किसी को भी क़ैद करने के लिये काफ़ी है कि उस व्यक्ति ने अफ़ग़ानिस्तान के सफ़र का एक ख़ास रास्ता अपनाया है या किसी ख़ास मस्जिद में इबादत की है या उसने ख़ास तरह की कलाई की घड़ी या लिबास का प्रयोग किया है। इसी तरह वो बच्चे भी अमरीका के मुजरिम हैं जो खेलते कूदते हुए भी उस जगह पहुंच गये हों जहां कोई धमाका हुआ हो।

इंग्लैन्ड का मशहूर अख़बार "द गार्डियन" ने लिखा है कि बहुत से पूर्व फ़ौजियों ने कैम्पनुमा में क़ैदियों में टार्चर से मानवता रहित और अत्यधिक हिंसा की घटनाए बयान की हैं जिनको सुनकर पेंटागन के स्पीकर ने भी चीख़ मार दी। इस्लाम को तौहीन वाले शब्दों से पुकार कर, क़ुरआन मजीद को प्रसाधन में बहाकर और जलाकर क़ैदियों को ज़हनी तकलीफ़ देना रोज़ का नियम है।

इराक़ी जनरल मुन्तज़िरूल असमारी के कथनानुसार एक चौदह साल के क़ैदी को खम्बे में इस तरह बांधा गया कि उसके पैर उसके सर के ऊपर थे। जिससे ख़ून का दौरान रुक गया और पूरा जिस्म लगभग अपंग हो गया वो इस सख़्त तकलीफ़ के बावजूद अल्लाहु अकबर का विर्द करता रहा। बिजली के झटके मुंह पर कपड़ा बांधकर कोठरियों में कई–कई दिन के लिये डाल देना, ग्लूकोज़ जिस्म में चढ़ाकर प्रसाधन को न जाने देना, रात भर जगाए रखना, कुत्तों को उन पर छोड़ देना, अमरीका के राष्ट्रीय गीत पर ज़बरदस्ती सलामी दिलाना, उनकी शक्ल कुत्तो की तरह कर देना। दाढ़ी और सर के बाल को मुंडाना, नंगा करना, औरत के अन्तःवस्त्र पहनने पर मजबूर करना और उन पर औरता का माहवारी ख़ून लगाकर इबादत के हवाले से ताना देना इत्यादि। इस जैसे जिस्मानी और ज़हनी तकलीफ़े देना आम हैं।

मीडिया मे गुआनतानामो बे की ख़बरे आने के बाद जनता ने ज़बरदस्त प्रदर्शन किया और उन मानवरहित कार्यों के ख़िलाफ़ प्रदर्शन भी किये। इन्टरनेशलन रेड क्रास के सर्वे सर्वा पीटर मावरर (Peter Maurer) ने अमरीकी राष्ट्रपति को अपनी रिपोर्ट देते हुए उस क़ैद ख़ाने के हालात को ठीक करने की सिफ़ारिश भी की। अतः 2009 में अमरीकी सदर बराक ओबामा ने सत्ता में आते ही उस क़ैदख़ाने को 120 दिनों के अन्दर बन्द करने का हुक्म दिया लेकिन उस पर अभी तक अमल न हुआ। जिसकी ज़िम्मेदार एक ओर ओबामा सरकार है तो दूसरी ओर वो मुस्लिम शासक भी मुजरिम हैं जो मुस्लामनों के क़ौमी व मिल्ली समस्याओं को हल करने का दावा करते हैं।

फ़िलिस्तीन के पीड़ित मुसलमान

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

नवम्बर 1947ई0 में सयुंक्त राष्ट्र संघ की एक क़रारदाद के द्वारा फ़िलिस्तीन का 55 प्रतिशत भाग यहूदियों को दिया गया। फिर 14 मई 1948 को इंग्लैन्ड और अमरीका की सांठगांठ से तिलअबीब नामक स्थान पर "यहूदियों के प्राकृतिक और ऐतिहासिक अधिकार" के तौर पर "इस्राईल" की स्थापना की घोषणा कर दी गयी और इसके बाद सैन्य अभियान के द्वारा इस्राईल की सीमाएं 78 प्रतिशत तक बढ़ती चली गयीं। 1967ई0 में सयुंक्त राष्ट्र संघ ने दो क़रारदादों के द्वारा इस्राईल को पुरानी सीमाओं में जाने का आदेश दिया किन्तु उस पर कोई कार्यवाही न हुई, बल्कि निहत्थे फ़िलिस्तीन को हर प्रकार से परेशान करने का सिलसिला चल पड़ा। उनके क्षेत्रों में जगह–जगह चौकियां स्थापित की जाती हैं। रास्ते बन्द कर दिये जाते हैं। कर्फ़्यू लगारक घर–घर की तलाशी ली जाती है। औरतों की इज़्ज़ते लूटीं जाती हैं। बच्चों को गिरफ़्तार कर लिया जाता है। उन्हें बेघर करके कैम्पों में रहने पर मजबूर कर दिया जाता है और फिर उन कैम्पों को भी क़ब्रिस्तान में बदल दिया जाता है, जिसकी एक मिसाल "जिनीन" नामी कैम्प है।

यहूदियों ने चूंकि फ़िलिस्तीन पर जबरन क़ब्ज़ा किया था। और वहां के लोगों को मजबूर किया था कि वो इस्राईल के अस्तित्व को स्वीकार करें। इसके परिणामस्वरूप यहूदियों और फ़िलिस्तीनियों के बीच युद्ध अनिवार्य था। अतः इस्राईल ने स्वयं को हर प्रकार से मज़बूत करने का हर संभव प्रयास किया। अपने शासन को दृढ़ करने के लिये यहूदी लाबी ने रासायनिक हथियारों की बहुताहत पर ज़ोर दिया। आज इस्राईल के पास हर प्रकार के रसायनिक हथियार हैं, जबकि इसी का बहाना बनाकर अमरीका ने इराक़ को तबाह कर दिया।

एक ओर इस्राईल ख़ुद को मज़बूत करके सदृढ़ हुआ तो दूसरी ओर फ़िलिस्तीन की तबाही, मस्जिदे अक़्सा की मख़दूशी, मौत की चीख़ व पुकार, बच्चों का रोना–धोना, इज़्ज़तो का लूटा जाना, ख़ून का बहना, भविष्य के अंधकार ने फ़िलिस्तीन के पूरे माहौल को बदले की भावना से भर दिया। मस्जिद–ए–अक़्सा को छुड़ाने के मामले ने नवजवानों को ईमान के जोश से भर दिया और फिर "हमास" नामी एक आन्दोलन वजूद में आया जो फ़िलिस्तीनियों की उम्मीदों और आशाओं का केन्द्र बना। उन्होंने इस्राईली तोपों का सामना ग़लेल से किया और जब कोई हथियार न मिला तो स्वयं एक हथियार बन गये।

आज़ादी की ख़ातिर फ़िलिस्तीन की जनता का इतिहास बहुत ही सब्र वाला और बहुत ही दिलख़राश भी है। कई नस्लें इसकी जद्दोजहद की भेंट चढ़ चुकी हैं। बूढ़े आज़ादी के स्वाद से वंचित और नवजवान इस शब्द के अर्थ से भी अपरिचित हैं। वर्तमान नस्ल भी अपने भविष्य से मायूस जंगी जीवन बिताने पर मजबूर है। लेकिन उनकी दृढ़ता और आज़ादी का उनका जज़्बा इतिहास के नये अध्याय रच रहा है और अपना सब कुछ क़ुर्बान कर देने के बावजूद वह इस्राईल के विरुद्ध ढाल बने हुए हैं।

1948 ई0 से अब तक इस्राईल – फ़िलिस्तीन झगड़ा संगीन होता जा रहा है। इस्राईल ने पूरे फ़िलिस्तीन को ख़ास करके ग़ज़्ज़ा के इलाक़े को न केवल एक क़ैदख़ाने में तब्दील कर रखा है, बल्कि आये दिन उस पर सैन्य कार्यवाहियां करता रहता है। कभी विद्युत व्यवस्था पंगु कर दी जाती है। कभी समुन्द्री रास्ते बन्द कर दिये जाते हैं और कभी सड़को पर आने–जाने को ग़ैर क़ानूनी घोषित कर दिया जाता है। खाने–पीने की ज़रूरी चीज़ें और दवा पर भी पाबन्दी लगा दी जाती है।

आज हमास की क़ैद में कोई भी इस्राईली क़ैदी नहीं है, जबकि इस्राईल की क़ैद में हज़ारों की संख्यां में फ़िलिस्तीनी एड़ियां रगड़ रहे हैं। जिनमें हज़ारों की संख्यां में औरतें भी शामिल हैं। इन क़ैद ख़ानों में हिंसा के ऐसे ऐसे तरीक़े अपनाये जाते हैं, जिनसे इन्सानी रूह कांप उठती है।

क़ैद ख़ानों में तकलीफ़ देने के नये–नये तरीक़े अपनाए जाते हैं। औरतों को भी किसी प्रकार की छूट नहीं दी जाती है। पर्दे वाली मुस्लिम औरतों को मर्दों के साथ एक ही बैरक में रखा जाता है, मर्दों की तरह उन्हें भी संख्त जिस्मानी सज़ाएं दी जाती हैं। जिससे बहुत सी औरतें शहीद भी हो जाती हैं, उस पर सितम ये कि इस्राईली

सरकार उन शहीद औरतों की लाशें भी उनके वारिसों के हवाले नहीं करती। कभी–कभी औरतें खुदकशी की कोशिश भी करती हैं, लेकिन सहयूनी दरिन्दों पर इसका कोई असर नहीं होता।

इस्राईली क़ैद ख़ानों में जहां हज़ारों की संख्या में बड़ी उम्र के लोग शामिल हैं वहीं सैंकड़ों की संख्यां में 18 साल की उम्र से कम के बच्चे भी ग़ैर क़ानूनी तौर पर क़ैद हैं। एक बड़ी संख्यां उन बच्चों की भी है जिनकी उम्रें 13 साल से भी कम हैं।

एक रिर्पोट के अनुसार सहयूनी पुलिस सालाना 700 से अधिक फ़िलिस्तीनी बच्चे गिरफ़्तार करती है। उन बच्चों को गिरफ़्तार करके जेलों में डाल दिया जाता है। उनके मां–बाप व रिश्तेदारों को मिलने की आज्ञा भी नहीं दी जाती। फिर उनके साथ जंगी मुजरिमों जैसा सुलूक किया जाता है। तौहीनआमेज़ और अव्यवहारिक रवैया अपनी जगह उन्हें वहशियाना जिस्मानी हिंसा का भी सामना करना पड़ता है। उन बच्चों को नंगा करके उनके हाथ–पांव बांध दिये जाते हैं। कई–कई रात व दिन उन्हें सोने नहीं दिया जाता। ज़ोर दिखाने वाले बच्चों को अंधेरी कोठरी में फेंक दिया जाता है और हिंसा के लिये ऐसे हरबे प्रयोग किये जाते हैं जिनको सोचने ही से रोंगटे खड़े हो जाएं। इन बेगुनाहों पर इस्राईली ज़्यादतियां अस्ल में मानवाधिकार का दावा करने वाली संस्थाओं की मुंह बोलता सुबूत है।

फ़िलिस्तीन के मुसलमान दुनिया के सबसे पीड़ित इन्सान हैं। जिनको अत्याचार सहते हुए आधी सदी गुज़र चुकी है। इस आधी सदी में लाखों फ़िलिस्तीनी अपने घरों से बेघर किये जा चुके हैं। आये दिन इस्राईल इन निहत्थे फ़िलिस्तीनियों के ख़िलाफ़ न केवल सैन्य कार्यवाही करता है बल्कि उसने पूरे देश को दुनिया के सामने सबसे बड़े क़ैदख़ाने में बदल दिया है। मासूम बच्चों की बिना कफ़न की लाशें तड़पती रहती हैं और ख़ाक व ख़ून में लुथड़े बेगुनाहों के अंग सड़ते रहते हैं लेकिन उम्मते मुस्लिमा के ठेकेदार मीटिंगे करने और क़रार दार मन्जूर करने में व्यस्त रहते हैं। फ़िलिस्तीन की मज़लूमियत और उनके ख़िलाफ़ जारी ये वहशत व बरबरता पूरी मुसलमान उम्मत के लिये एक इबरत का सामान है।

शेष : सोशल मीडिया पर इस्राईल की .....

हर ओर से एंबुलेंस के सायरन सुनायी दे रहे थे। आरम्भ में फ़रह के ट्वीटर की कार्यवाहियों में दिलचस्पी लेने वालों की संख्यां केवल 8/सौ थी, लेकिन कुछ ही हफ़्तों के अन्दर ये संख्यां बढ़कर 1,66,000/ हो गयी। फ़रह ने दुनिया भर से ग़ज़्ज़ा की स्थिति के बारे में सवालों के जवाब पूरी सरगर्मी के साथ दिये। फ़रह ने **(#Ask Farah)** के नाम से नया ट्वीटर एकाउन्ट शुरू किया और फ़रह का कहना है कि मैं दुनिया को बताने की कोशिश कर रहीं हूं कि मैं क्या महसूस करती हूं और जहां मैं रह रही हूं वहां क्या हो रहा है। मैं लोगों को भी इस बात का एहसास दिलाने की कोशिश करती हूं, जिससे हम फ़िलिस्तीनी गुज़र रहे हैं। मेरे लिये ग़ज़्ज़ा की मदद का यही एकमात्र रास्ता है। कई बार मैं रोते हुए या बहुत ही डरते हुए ट्वीट करती हूं, लेकिन मैं अपने आप को समझाती हूं कि मुझे रुकना नहीं है। फ़िलिस्तीनियों के ओर से सोशल मीडिया के प्रभावपूर्ण उपयोग का उत्कृष्ट उदाहरण ये है कि यूट्यूब पर अपलोड की जाने वाली सैंकड़ों वीडियो हैं, जिन्होंने दुनिया भर में तहलका मचा दिया था। एक वीडियो में देखा गया कि नवजवानों का सहायतार्थ जत्था परिवार वालों को खोजने में एक दूसरे की मदद कर रहा था कि अचानक गोली लगने से एक फ़िलिस्तीनी नवजवान मलबे के ढेर पर गिर कर ख़त्म हो जाता है। एक इस्राईली सैनिक ने निशाना लगाकर फ़िलिस्तीनी नवजवान को जो निहत्था था, मार डाला। पहले शर्क़े औसत की ख़बरें इस्राईल की ओर से होती थीं, क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया पर यहूदियों का कन्ट्रोल है लेकिन अब सोशल मीडिया के कारण ये स्थिति बदल रही है। यहूदी कन्ट्रोल वाली मीडिया या अपने लाभ व उद्‌देश्यानुसार झूठ को सच बना रही है। लेकिन सोशल मीडिया की ख़बरें व तस्वीरें वास्तविकता प्रस्तुत करती हैं अतः अब अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया को भी अपनी कार्यशैली बदलने पर मजबूर होना पड़ रहा है। इस एतबार से सोशल मीडिया एक महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी बदलाव का आधार रख रहा है।

रब्ब-ए-काबा की क़सम

अबुल अब्बास ख़ाँ

सत्तर सहाबा किराम का इल्मी व रूहानी काफ़िला पूरी तेज़ी के साथ रवां था। उसकी मंज़िल बनू सलैम के आबादी थी, जो मदीना मुनव्वरा से ख़ासी दूर नज्द के इलाक़े में आबाद थी। ये काफ़िला पूरी ज़मीन पर सबसे मुक़द्दस और बरकत वाला काफ़िला था। हर फ़र्द के जुलू में जहां आबाद था। हर शख़्स रमूज़े शरीअत का राज़दां। इसरारे इलाही का रम्ज़ शिनास। फ़रमूदाते नबविया का अमीन और अल्लाह के कलाम का हाफ़िज़ व क़ारी था। ये सब रसूले मक़बूल स0अ0 के ख़ास परवरदा थे। सुफ़्फ़ाए नबवी की ज़ीनत थे और आज इस्लाम की दावत के लिये रसूले महबूब से दूर एक ऐसे इलाक़े की तरफ़ रवां हैं जो इस्लाम के बदख़्वाहों का है। लेकिन इस्लाम की दावत उन्हें भी देनी है। रसूल का हुक्म हर चाहत से बढ़कर है।

बनू सुलैम का सरदार आमिल बिन तुफ़ैल बहुत ही घमन्डी आदमी था। ताक़त व दौलत के नशे में चूर। रसूलुल्लाह स0अ0 की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और कहने लगा कि मेरी तीन तजवीज़ें हैं, आप उनमें से कोई भी एक क़ुबूल कर लीजिए। पहली ये कि हुकूमत में बंटवारा कर लो, देहात का इलाका आपका हो और शहर का इलाक़ा मेरा हो। दूसरी ये कि आप मुझे अपना जानशीन नामज़द करें और तीसरी ये कि मैं हज़ारों के लश्कर के साथ आप पर हमला कर दूं। नबी करीम स0अ0 ने उसकी बातों पर कोई तव्वजो न दी और वो नामुदार होकर अपने इलाक़े को वापिस लौट आया। कुछ दिनों के बाद उसका चचा हाज़िर हुआ। चिकनी–चुपड़ी बातें की, क़समों पर क़समें खायीं, दुहाइयां दी और यक़ीन दिलाया कि दावत व तब्लीग़ के जरिये उसका क़बीला मुसलमान हो जायेगा। नबी करीम स0अ0 ने उसकी दरख़्वास्त कुबूल कर ली।

मुबारक काफ़िले ने मन्ज़िल से कुछ दूर पहले बीरे मऊना में पड़ाव डाला। रसूलुल्लाह स0अ0 की हिदायत के मुताबिक़ हराम बिन मलहान रज़ि0 ने दो साथियों को लिया। अम्र बिन तुफ़ैल की बस्ती में पहुंचे। साथियों को दूर रोका और खुद उससे जाकर मिले। नबी करीम स0अ0 का ख़त उसके हवाले किया और जवाब का इन्तिज़ार करने लगे। आमिर ने ख़त लिया, चारों तरफ़ नज़रे दौड़ाईं, इब्ने मलहान का की ताक़त का अन्दाज़ा किया, उनके तन्हा होने का यक़ीन किया और फिर शातिराना नज़रों से अपने साथियों को इशारा किया। जब्बार बिन सलमा पीछे ही खड़ा था। इशारा मिलते ही उसने हमला कर दिया। भाला छाती को चीरता हुआ उस पार जा निकला। ख़ून का फ़व्वारा छूट गया। इब्ने मलहान ज़ख़्मी हो गये। अचानक हमले ने संभलने का मौका भी नहीं दिया। उनका वजूद ख़ून में लथपथ हो गया। लेकिन इस मर्दे मुजाहिद ने न चीख़ मारी, न गालियां बकीं, न साथियों को आवाज़ दी, न आमिर को बुरा–भला कहा, बल्कि उस बिस्मिल ने पूरे दर्द व सोज़ और यक़ीन के साथ नारा लगाया: "रब्बे काबा की क़सम! मैं कामयाब हो गया।"

अम्र बिन तुफ़ैल ने अपने साथियों को इकट्ठा किया और बीरे मऊना पर चढ़ाई कर दी, सहाबा किराम को चारों तरफ़ से घेर लिया। तलवारों, भालों और तीरों की उन पर बौछार कर दी। तादाद की कसरत और अचानक हुए हमले ने उन्हें जमने का मौक़ा भी नहीं दिया और फिर नतीजा वहीं हुआ जिसकी उम्मीद की जा सकती थी। एक–एक करके सभी हाफ़िज़ों ने शहादत का जाम पी लिया और इस्लाम के इतिहास का एक अहम अध्याय उनके नाहक़ ख़ून से लिखा गया।

ख़ून के फ़व्वारों से पूरी सरज़मीन लाल हो गयी। लाशें ठन्डी पड़ गयीं। चील व गिद्ध भी मंडलाने लगे। आमिर बिन तुफ़ैल की आंखे चमक उठीं। बनू सुलैम में रोशनी की गयी। ख़ुशी के गीत गाये गये। पूरा क़बीला मगन हो गया। लेकिन जब्बार बिन सलमा के दिल में एक फ़ांस सी चुभी हुई थी। इब्ने मलहान की शहादत का मन्ज़र उसके दिमाग़ की सिलवटों पर जम चुका था। उसके कानों में वही आवाज़ गूंजती थी, "रब्बे काबा की क़सम! मैं कामयाब हो गया।" आख़िर उसने किस कामयाबी की बात की थी?क्या है ये कामयाबी?और कितना यक़ीन था उसके जुम्ले में! कितनी शिद्दत थी उसके लहजे में! और कितना सुकून था उसके चेहरे पर, लेकिन जीत तो हमारी हुई। हमने सबको मौत के घाट उतार दिया, फिर उसने ऐसा क्यों कहा?

इस सवाल के जवाब में जब्बार बिन सलमा मदीना जा पहुंचे और नबी करीम स0अ0 से पूरा वाक़्या बयान कर दिया। आप स0अ0 ने उन्हें इस्लाम की हक़ीक़त, जिहाद की फ़ज़ीलत और शहादत का मक़ाम व मर्तबा समझाया, जब्बार बिन सलमा ने इस्लाम को अच्छी तरह से समझा। उस कामयाबी को भी समझा, और फिर इस्लाम कुबूल करके खुद भी हमेशा के लिये कामयाब व कामरान हो गये।

सुब्हानल्लाहि, अल्हम्दुलिल्लाहि, अल्लाहु अकबर

दूसरा वाक़्या हज़रत फ़ातिमा रज़ि० का है वो घर का काम करती थीं, ख़ुद चक्की पीसती थीं। उससे हाथों में गट्टे पड़ गये थे और ख़ुद ही मश्क भर कर लाती थीं, ख़ुद झाड़ू देती थीं। एक बार आप स०अ० की ख़िदमत में कुछ लौंडी गुलाम आये हज़रत अली रज़ि० ने हज़रत फ़ातिमा रज़ि० से कहा तुम अपने वालिद की ख़िदमत में जाकर एक ख़ादिम मांग लाओ ताकि सहूलत रहे। वो हुज़ूर पाक स०अ० की ख़िदमत में गयीं देखा कि भीड़ लगी हुई है, इसलिये वापिस आ गयीं। दूसरे दिन हुज़ूर ख़ुद तशरीफ़ लाये और पूछा कि कल तुम किस काम को गयीं थीं। हज़रत फ़ातिमा रज़ि० तो शर्म की वजह से चुप रहीं, हज़रत अली रज़ि० ने कहा, हुज़ूर! चक्की पीसते–पीसते हाथों में निशान पड़ गये, मश्क़ भरते–भरते सीने पर दाग़ पड़ गये, झाड़ू देते–देते कपड़े मैले हो गये, कल आपकी ख़िदमत में कुछ लौंड़ी गुलाम आये थे, मैने इनको भेजा था कि कोई गुलाम मांग लाओ, ताकि कामों में आसानी हो।

आप स०अ० ने फ़रमाया: फ़ातिमा! अल्लाह से डरती रहो, और उसके फ़राएज़ अदा करती रहो और घर के कारोबार को चलाती रहो और जब सोने के लिये लेटो तो सुब्हानल्लाहि, अल्हम्दुलिल्लाहि, अल्लाहु अकबर तैतींस–तैतींस और चौतिस बार पढ़ लिया करो। ये ख़ादिम से बेहतर है।

हज़रत फ़ातिमा रज़ि० ने अर्ज़ किया, मैं अल्लाह और उसके रसूल स०अ० के हुक्म पर राज़ी हूं।

आप स०अ० अपने घरवालों और रिश्तेदारों को ख़ास करके तस्बीह का हुक्म फ़रमाया करते थे, अज़्वाज मुतहरात से इरशाद फ़रमाया करते थे कि जब वो सोने का इरादा करें तो ये तस्बीह पढ़ लिया करें। अल्लाह के ज़िक्र से तो आख़िरत में सवाब मिलेगा ही, इस दुनिया में भी इसके बड़े फ़ायदे हैं सबसे बड़ा फ़ायदा दिन का चैन व क़रार है। जिसकी हर आदमी को ज़रूरत होती है और इस समय ये मफ़क़ूद है, हर शख़्स परेशान, बेचैन और बेकल नज़र आता है और ज़िन्दगी तंग मालूम होती है। इसका इलाज अल्लाह की याद है।

मौलाना मुहम्मद सानी हसनी रह०

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP - 10

ISSUE: 03 MARCH 2015 VOLUME: 07

DECLARATION OF OWNERSHIP AND OTHER DETAILS
FORM 4 RULE 8

Name of Paper:	Arafat Kiran
Place of Publication:	Raebareli
Periodicity of Publication:	Monthly
Chief Editor:	Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
Nationality:	Indian
Address:	Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli (U.P.) 229001
Printer/Publisher:	Mohammad Hasan Nadwi
Nationality:	Indian
Address:	Maidanpur, Post. Takiya Kalan, Raebareli (U.P.) India
Ownership:	Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi

I, Mohammad Hasan Nadwi, printer/publisher declare that the above information is correct to the best of my knowledge and belief.

(March 2015)

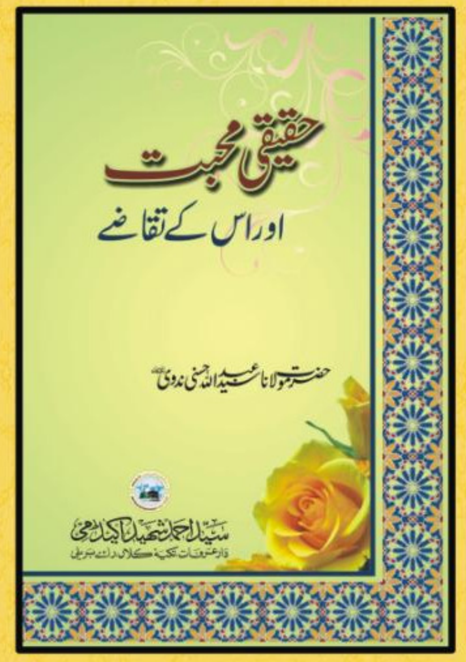

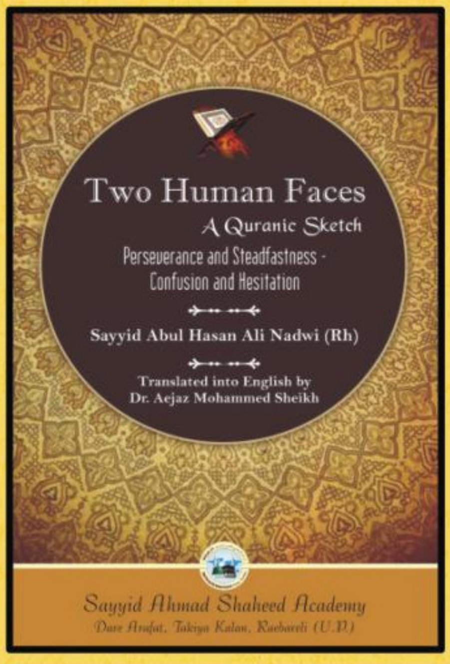

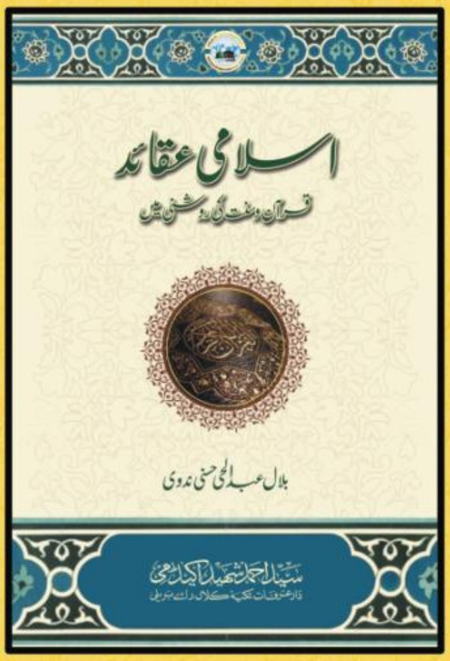

Contact: 9919331295

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9792646858
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.